दशलक्षणधर्म-पूजा

कविवर द्यानतराय

अडिल्ल

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं,
शौच सत्य संयम तप त्याग उपाव हैं।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दर सार हैं,
चहुँगति-दुख तैं काढ़ि मुकति करतार हैं।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म। अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा

हेमाचल की धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि।
भव-आपात निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मचर्याणीति दशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर गार, होय सुवाय दशों दिशा। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय संसार तापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों। भव.।

ॐह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्रस-संजुगत। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाति कपूर सुधार, दीपक-ज्योति सुहावनी। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल की जाति अपार, घ्रान-नयन-मनमोहने। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सौं। भव.।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगपूजा

सोरठा

पीड़ैं दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा।।

चौपाई

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस पर-भव सुखदाई।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो।।

गीता छन्द

कहि है अयानो वस्तु छीनैं, बाँध मार बहुविधि करै।
घर तैं निकारै तन विदारै, बैर जो न तहाँ धरै।।
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्यजल ले सीयरा ।।१।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महाविष रूप, करहिं नीच-गति जगत में।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा।।
उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करन को कौन ठिकाना।
वस्यो निगोद माहि तैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया।।

रूकन बिकाया भागवश तैं, देव इकइन्द्री भया।
उत्तम मुआ चाण्डाल हूवा, भूप कीड़ों में गया।।
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल-बुदबुदा।
करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावै उदा ।। २।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा।।
उत्तम-आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मन में हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये।।
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अंगार-सी।।
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि, करमबन्ध-विशेषता।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ।। ३।।

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि हिरदै सन्तोष, करहू तपस्या देह सौं।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में।।
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी।।
प्रानी सदा शुचि शील जप-तप, ज्ञान-ध्यान प्रभाव तैं।
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभाव तैं।।
ऊपर अमल मल भर्यो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहैं।
बहु देह मैली सुगुन थैली, शौच-गुन साधु लहैं ।। ४।।

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कठिन वचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी।।
उत्तम सत्य वरत पालीजै, पर विश्वासघात नहिं कीजै।
साँचे-झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो।।
पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरब सब दीजिये।
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा साँच गुण लख लीजिये।।
ऊँचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरम का भूपति भया।
वच झुठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ।।५।।

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संजमरतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं।।
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजें अघ तेरे।
सुरग नरक पशुगति में नाहीं आलस हरन करन सुख ठाहीं।।
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना धान नैना, कान मन सब वश करो।।
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जम-मुख बीच में ।।६।।

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहै सुरराय, करम-शिखर को वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय क्यों न करै जिन सकति सम।।
उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र समाना।
वस्यो अनादि निगोद-मँझारा, भूविकलत्रय पशुतन धारा।।
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्री जैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता।।
अति महा-दुर्लभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरैं।
नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं ।।७।।

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दान चार परकार, चार-संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव-लाहो लीजिए।।
उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान संभारै।।
दोनों संभारे कूप-जलसम, दरब घर में परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया।।
धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोध को।
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को ।। ८।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए।।
उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिंता दुख ही मानो।
फाँस तनक-सी तन में सालै, चाह लँगोटी की दुख भालै।।
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि मुद्रा धरैं।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परैं।।
घर-माहिं तिसना जो घटावैं, रुचि नहीं संसार सौं।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगार सौं।। ९।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शील-बाढ़ नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख करहु सफल नरभव सदा।।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता-बहिन-सुता पहिचानौ।
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-वान लखि कूरे।।
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करैं।
बहु मृतक सड़हिं मसान माँहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं।।
संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।।
'द्यानत' धरम दश पैंडि चढ़िकै, शिव-महल में पग धरा ।। १०।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दश लच्छन वन्दौं सदा, मन-वांजित फलदाय।
कहों आरती भारती, हम-पर होहु सहाय।।

बेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर बाहिर शत्रु न कोई।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै।
उत्तम शौच लोभ परिहारी, सन्तोषी गुण-रतन-भंडारी।।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता।।
उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई।।
उत्तम आकिंचन व्रत धारै, परम-समाधि-दशा विस्तारै।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नर-सुर सहित मुकतिफल पावै।।

दोहा

करै करम की निरजरा, भव-पींजरा विनाश।
अजर-अमर पद को लहैं, 'द्यानत' सुख की राश।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्या-गाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

श्री दशलक्षण मण्डल विधान

जोगीरासा

नेमीनाथो, दे तो साथो[1], भव भव और न चाहूँ।
भक्ति तिहारी, निशिदिन मन वच काय लाय करि गाऊँ॥
धर्म कह्यो तुम, वानी दशविधि, सो मोहि होउ सहाई।
करुणासागर, समरस गर्भित, शीश नमों थुति गाई॥१॥

गीता छंद

धर्म के दश कहे लक्षण, तिन थकी जिय सुख लहै।
भवरोग को यह महा औषधि, मरण-जामन दुःख दहै॥
यह वरत नीका, मीत जी का[2], करो आदरतैं सही।
मैं जजों दशविधि धर्म के अंग, तासु फल ह्वै शिवमही॥२॥

पद्धरि छन्द

यह धर्म भवोदधि नाव जान, या सेवें भवदुख होय हान।
यह धर्म कल्पतरु सुक्ख पूर, मैं पूजों भवदुख करन दूरा॥३॥

गीता छन्द

यह वरत मन-कपि गले माँही, सांकली सम जानिये।
गज-अक्ष[3] जीतन सिंह जैसो, मोहतम रवि मानिये॥
सुस्थान[4] माहीं वरत नाहीं, मनुजहूँ शुभ कुल लहै।
तातैं सुअवसर है भलो, अब करौं पूजा धुनि कहै॥४॥

बेसरी छन्द

जाने दशलक्षण व्रत कीना, ते सत्पुरुषनि में परवीना।
भवसागर फिरनो मिट जावै, जो नर दशलक्षण वृष[5] भावै॥५॥

भुजंगप्रयात छन्द

यही धर्म सारं, करै पाप क्षारं, वही धर्म सारं, करै सुख अपारं।
यही धर्म धीरा, हरै लोकपीरा, यही धर्म मीरा[6] करै लोकतीरा॥६॥

1.तुम्हारा साथ। 2.जीव का मित्र। 3.इन्द्रियरूपी हाथी को। 4.स्वर्ग। 5.धर्म। 6.प्रधान।

त्रिभंगी छन्द

यह धर्म हमारा, सब जग प्यारा, जगत उधारा हितदानी।
यह दशविधि गाया, जन-मन भाया, उच्च बताय जिनवानी॥
यह शिव करतारा, अघतैं न्यारा, भवि उद्धारा मुनि धारा।
ताको मैं ध्याऊँ, शीश नवाऊँ, अर्घ चढ़ाऊँ सुखकारा॥७॥

चौपाई

या व्रत की महिमा कहि वीर, दशविधि धर्म हरैं भवपीर।
इसी धर्म बिन जग भरमाय, जजहुँ धर्म अति दुरलभ पाय॥८॥

दोहा

दश प्रकार को धर्म यह, दशविधि सुरतरु जान।
वांछित पद सेवक लहै, अधिक कहा सुखदान॥९॥

सोरठा

धर्म हमारा नाथ, धर्म जगत का सेहरा।
भव भव में हो साथ, और न वांछा मनविषै॥१०॥

मण्डलमध्ये पुष्पांजलिं क्षिपेत्

समुच्चय पूजा

त्रिभंगी छन्द

यह धर्म क्षमा वा, मान गुमावा, सरल सुभावा सतिवानी।
शुचि भाव करावा, संजम लावा, तप करवावा अधिकनी॥
शुचि त्याग बतावै, नगन पुजावै, शील बढ़ावै शिवदाई।
यह धर्म दशारा, थाप करारा, पूजन धारा शिरनाई॥१॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

मणुयणाएंद की चाल

क्षीरसागर तना नीर शुभ लाइये।
कनक झारी विषैं धार गुण गाइये।
मरण उत्पत्ति नहीं होय ता फल सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥१॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

नीर संग अगर चन्दन घिस लायजी।
सुभग पातर विषैं धारि थुति गायजी॥
जगत ताप तासु फल तुरत नाशै सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥२॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व० स्वाहा।

लेय अक्षत भले मुक्तिफल से कहे।
ऊजले अखण्ड सुभग स्वर्ग पातर लहे॥
अक्षयपद पावनै ताप मनमें सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥३॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० स्वाहा।

फूल कंचनवरन कल्पतरु के भले।
गंध जुत रंग शुभ लेइ निज कर चले॥
माल तिन गूँथ कामबाण नाशक सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥४॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा।

सुभग नैवेद्य मोदक घने लाइये।
विविध स्वादमय सु धरि भक्ति उर भाइये॥
भूख दुखहर्ण स्वर्णपात्र धरि के सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥५॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० स्वाहा।

दीप मणि रतनमय और घृतमय लही।
धारि कनकथाल में सु आरति जु करि लही॥
धर्मज्योति मोह अन्धकार नाशिका सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥६॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व० स्वाहा।

धूप दश अंग मय लायकर सारजी।
अगनि संग खेवहूँ सुभक्ति उर धार जी॥
कर्म क्षयकार भव-वास नाशन सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥७॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

लौंग खारिक सु नारिकेल सुक्खकारजी।
और बादाम पुंगी फलादि सारजी॥
लेइ निज हाथ में सुभक्ति धरि के सही॥
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥८॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

नीर गन्ध अक्षत सुफूल चरु सोइ जी।
दीप अरु धूप फल अरघ संजोइजी॥
पुरट थाली विषैं भक्ति करके सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥९॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

धर्म भव कूपतैं काढ़ने को रसी।
भव उदधि पार करतार नवका इसी॥
धर्म सुख दैन जिमि तात माता सही।
जानि इमिधर्म दशधा जजों शिवमही॥१०॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो महार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जयमाला

दोहा

दश वृष रतन मिलाय के, माल करै भवि जोय।
धरै आपने उर विषैं, ता सम और न कोय॥१॥

बेसरी छन्द

दशलक्षण वृष शिवमग दीवा[1], धर्म थकी सुख पावैं जीवा।
मुकति दीप[2] पहुँचावन नावा[3], ये दश धर्म जजौं जुत भावा ॥२॥
दशविधि धरम धरै जो कोई, करम नाशि फिर दुख नहिं होई।
धरम जु साधन और न कोई, यो दश धर्म जजौं मद खोई ॥३॥
धरम जीव का पालनहारा, धरम मान का खण्डनवारा।
धरम थकी जावै कुटिलाई, इमि दश धर्म जजौं चितलाई ॥४॥
साँच वचन सम धरम न आनौ, धर्म भाव निर्मल पहचानौ।
धर्मजीव-रख[4] इन्द्रिय जीतं, इमि लखि धर्म जजौं कर प्रीतं ॥५॥
तप ही सर्व धर्म का मूला, त्याग धरमतैं क्षय अघ थूला।
धर्म नगन[5] सम और न कोई, इमि दशधर्म जजौं मद खोई ॥६॥
नारी त्याग धरम शिवदाई, ये दश धरम जगत में भाई।
जो दश लक्षण मनमें आनै, सो भव-तप-हर-शिवपद ठानै ॥७॥
दशलक्षण व्रत इह विधि कीजे, उत्कृष्टैं दश वास करीजे।
नातर[6] बेले[7] पारनभाई, तथा इकन्तर वास कराई ॥८॥
शक्तिहीन ह्वै तो सुन मीता, दश एकान्त करौ धरि प्रीता।
व्रत दश वर्ष करै मन लाई, करूँ उद्यापन मन वच काई ॥९॥
नहिं उद्यापन शक्ति तुम्हारी, तौ दूनो व्रत करूँ सुखकारी।
पीछे यथाशक्ति खरचावै, पूजन धरम उद्योत करावै ॥१०॥

दोहा

इत्यादिक विधि सहित जो, धर्म करै दश सार।
पावै सुख मन भावनो, अनुक्रम ले भव-पार॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणधर्मेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

●●●

1.दीपक। 2.द्वीप। 3.नौका। 4.जीव की रक्षा। 5.आकिंचन्य धर्म। 6.नहीं तो। 7.दो दिन उपवास।

उत्तम क्षमा धर्म पूजा

अडिल्ल

जीव तिरस थावर जेते तग में सही।
देव नरक नर पशू चारि गति की मही॥
तिन सब ऊपर दयाभाव उर माँहि जी।
सो है उत्तम क्षमा थापि जजूँ याहिं जी॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अथ अष्टक

पद्धरि छन्द

जल गंग नदी को विमल सोइ, धरि रतन पियाले शुद्ध होइ।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमाधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

बावन चन्दन घसि नीर लाय, धरि कनक रकेबी जिन चढ़ाय।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

अक्षत मुक्ताफलसम जु लाय, अति उज्वल नखशिख शुद्ध भाय।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

शुभ फूल कल्पतरु के अनूप, करि माला सुमन सुगन्ध रूप।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

नाना रस पूरित चरु सम्हाल, शुभ मोदक आदि अनेक धार।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

मणि दीपक सार बनाय लाय, धरि कनकथाल भरि भक्ति भाय।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

ले धूप अगुरुजा अन्धकार, दुर्भाव हुताशन माहिं जार।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

फल नारिकेल बादाम सोई, पुंगीफल खारक भक्ति जोइ।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत फूल लाय, चरु दीप धूप फल अर्घ भाय।
यह धर्म क्षमा उत्तम सुजान, मैं पूजों मन वच भक्ति आन॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

अडिल्ल

पाप प्रकृति कर जीव अशुभ बंधन कर्यो।
थावर नामा कर्म उदय दुख को भर्यो॥
पृथ्वी माहिं सु जाय सहे बहु अघ फला।
तिनका रथण भाव क्षमा उत्तम भला॥१॥

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जे जलकायिक जीव ज्ञान बिन दुख लहैं।
इक इन्द्रिय के द्वार अतुल विपदा सहैं॥
तिनको दुखमय जानि मुनी करुणा करैं।
तसु प्रसादतैं झटिति मोक्ष वनिता वरैं॥२॥

ॐ ह्रीं जलकायिक-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अगनिकाय धर जीव एक इन्द्रिय सही।
नाना दुःख तन सहैं जलै सब जग मही॥
इन पर करुणाभाव धरैं जे भवि सही।
सो ही उत्तम क्षमा मोक्षदाता कही॥३॥

ॐ ह्रीं अग्निकायिक-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

पवनकाय के जीव महा संकट सहैं।
हाथ पाँव मुख वचन थकी बाधा लहैं॥
इन पर करुणाभाव जती धारै सही।
सो ही उत्तमक्षमा कही शिव की मही ॥४॥

ॐ ह्रीं वायुकायिक-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

हरित काय में प्राणी अति वेदन लहै।
छेदन भेदन कष्ट महा अघ फल सहै॥
इन पर समता भाव सुखी इनको चहै।
सो ही उत्तम क्षमा धारि मुनि शिव लहै ॥५॥

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिक-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

थावर के पन भेद पाप फलतैं बने।
सूक्ष्म बादर भेद दोय यों जिन भने॥
इनको दुखमय जानि दया मन लाय है।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं शिर नाय है ॥६॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मस्थूलपंचस्थावर-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

लट अरु जोक गिडोला इल्ली जानिये।
कौड़ी शंख दुइन्द्रिय अति दुख थानिये।
इन पर करुणाभाव जती धारैं सही।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं शिवकी मही ॥७॥

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

चींटी कुंथा खटमल बीछू दुखमही।
ते इन्द्रिय परजाय पाय घुण आदि ही॥
इनको दुखमय जानि मुनी करुणा धरैं।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं सब अघ जरैं ॥८॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

माखी मच्छर टीडी भँवरादिक सही।
बर्र ततइया मकड़ी चतुरिन्द्रिय कही॥
इनको दुखिया देखि मुनी करुणा धरैं।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं वसुविधि जरैं ॥९॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

इन्द्रिय पाँचों होय, नहीं मन जो लहै।
ते जिय जानि असैनी अघफल अति दहै॥
इनको दुख भरपूर जानि करुणा धरै।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं शिवथल धरै ॥१०॥

ॐ ह्रीं असंज्ञीपंचेन्द्रियजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

नरक जीव अति दुखी पापफलतैं सही।
छेदन भेदन पीर सहैं जात न कही॥
इन पर करुणाभाव जती अति लाय हैं।
सो ही उत्तम क्षमा जजौं सुखदाय हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं नारकीजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

गीता छंद

मनुष क्रोध रु मान माया, लोभवश दुखिया घने।
बहुचाह पीड़त रागद्वेषी, अघ घनो उपजे तिने॥
तिन देख यतिवर दया लावे, महादीन दयाल जी।
सो धर्म उत्तम क्षमा निर्मल, जजौं भाग्य विशालजी॥१२॥

ॐ ह्रीं मनुष्यजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

परकार चारों देव गति में, जीव सुख राचै सही।
लछि देखि परकी झुरै नितही, मानतैं पीड़ा कही॥
तिन देखि मुनि उर दया लावै, महा कोमल भावजी।
सो धर्म उत्तम क्षमा पूजौं, अर्घतैं कर चावजी॥१३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विधिदेवजीव-परिक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

बेसरी छन्द

थावर तिरस जीव जब जोई, चहुँगति करमनि केवशि होई।
तिनको देखि दया उर लाई, सो उत्तम खम धर्म जजाई॥१४॥

ॐ ह्रीं त्रसस्थावर-समस्तजीव-परिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

धर्म क्षमा उत्तम बड़ो, सब जीवन सुखदाय।
जजै जीव सो पुनि लहै, करै जु शिवपुर जाय॥१॥

बेसरी छन्द

सब जीवन में राग न दोषा, सो है क्षमा धरम निरदोषा।
दुर्जन कृत उपसर्ग लहावै, ताहू पै समभाव रहावै॥२॥
मुनि को वचन कहै दुखकारी, मरम छेद छेदै अघ धारी।
मान खंड किरिया करवावै, तब मुनि क्षमा धर्म मन लावै॥३॥
जे कोई दुष्ट मुनिन को मारै, तीक्ष्ण शस्त्रतैं करि परिहारै।
बाँधै तन को खेद न पावै, तिनपर क्षमा धर्म मन लावै॥४॥
अति दुखिया जियको ऋषि जानैं, तब मुनि अनुकंपा मन आनै।
आपा पर को हित उपजावै, तब मुनि क्षमा धरम मन लावै॥५॥
उत्तम क्षमा धरम सुखदाई, क्षमा धरम सब जियका भाई।
जब मुनिहू पै कष्ट जु आवै, तब मुनि क्षमा धरम मन लावै॥६॥
क्षमा धरमसी ढाल न होई, क्रोध समान प्रहार न कोई।
क्षमा समान न बल अति पावै, तातैं जती क्षमा वृष भावै॥७॥
क्षमा धरम शिव राह बताई, क्षमा तात मात अरु भाई।
जातैं सिद्ध सुखन को पावे, ऐसी क्षमा मुनी मन लावै॥८॥

सोरठा

क्षमा आभूषण सार, उर में जो परिहरे सही।
ते भवसागर पार, जजौं धर्म उत्तम क्षमा॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

उत्तम मार्दव धर्म पूजा

पद्धरि छन्द

मार्दव वृष भाव विचार सोई, जहाँ मान भाव दीखे न कोई।
इह धारी मुनि शिवगामि जानि, मैं जजौं थापि मार्दव सुभानि॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अथ अष्टक

चाल मणुयणानन्द की

क्षीर सम नीर शुद्ध गाल कर लाइये।
पात्र सुवरण विषैं धारि गुण गाइये॥
जगत फिरनो मिटे तासु फलतैं सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

स्वच्छ नीर संग चंदनादि को मिलाय जी।
शुद्ध गंधयुक्त भक्तिभावतैं चढ़ायजी॥
जगत आताप-हर जानि ता फल सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

अक्षतं समुज्वलं खंड बिन जानिये।
सुभग मोती जिसे थाल भरि आनिये॥
ध्रौव्य फलदाय मनलाय ध्याऊँ सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

फूल कल्पवृक्ष के गंध रंग सारजी।
माल गूंथि शुद्धभाव भक्ति कर धारजी॥

मदन मद हरन सुफल जानि यातैं सही॥
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

सुभग रस शुद्ध नैवेद्य मन लाइये।
मोदकादि शुद्ध भक्तिभावतैं चढ़ाइये॥
धारि स्वर्णपात्र शुद्ध मन वचन तन सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

दीप रतनमयी नाश तमको करा।
कनक पातर विषैं भक्तिभावतैं धरा॥
नाश अज्ञान ह्वै तासु फलतैं सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

धूप दशगंध शुभ लेय मन मानिये।
अगर चंदन सबै मेलि शुभ ठानिये॥
अग्नि संग खेइये कर्म जालन सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

श्रीफलादि लौंग पुंगीफलादि जानिये।
शुद्ध बादाम खारक भले आनिये॥
सिद्ध थानक लहै तासु फलतैं सही॥
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

नीर चंदन अखिल पुष्प चरु दीप जी।
धूप फल अर्घकर भाव शुद्ध टीपजी॥

लोक में फिरन, तन धरन मिटि है सही।
धर्म मार्दव जजौं शुद्ध शिवदा मही॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

चाल मणुयणानन्द की

देव वीतराग सर्वज्ञ तारक सही।
दोष अष्टादशों तासु माहीं नहीं॥
नमन तिन पद करै धर्म मार्दव कह्या।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेव-पद-नमन-मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग देव कही वानि सो धर्म है।
ता सुनै जीव निज हरै भाव भर्म है।
मन वचन काय श्रुतपाद सिर नाय हैं।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनधर्म-पद-नमन-मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

धर्म को सेय तप लेय कर्म जार जी।
भय सिद्ध देव तन रहित सुखकारजी॥
लेय इन नाम मन वचन शिर नाय है।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्ध-पद-नमन-मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

धारि छत्तीस गुण सूरि सुखदायजी।
धर्म तप भाव सों गुप्त धरि भायजी॥
मान तजि नमन इन पद विषैं लाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्य-पद-नमन-मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

धारि गुण पाँच अरु बीस उवझायजी।
और भी अनेक गुण पास तिन थायजी॥
मान तजि इन चरण कायको नाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीउपाध्याय-पद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

क्षेत्र अतिशय तहाँ धर्म को धाय है।
नमन बहु जिय करै देव गुण गाय हैं॥
मान तजि क्षेत्र शुभ जानि शिर नाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीअतिशयक्षेत्र-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

देव जिनकी सु प्रतिमा अकृत्रिम इसी।
रूप द्युति ध्यानमुद्रा कही जिन जिसी॥
मान तजि शीश इन चरण को सुनाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीअकृत्रिमजिनचैत्य-पद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सुरग थानक विषैं देव जिनके सही।
रतनमय जैन बिम्ब बिगर किये हैं मही॥
मान तजि शीश इन चरणको सुनाइयो॥
धर्म मार्दव सु तासु फल मोक्ष पाइयो॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीऊर्ध्वलोकसम्बन्धिजिनचैत्य-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

ज्योतिषी व्यन्तरा थान मध्यलोकजी।
बिन किये चैत्य जिन कहे अघ रोकजी॥
मान तजि शीश इन चरणको सुनाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्या॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीमध्यलोकसम्बन्धिजिनचैत्य-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

भवन देवनि विषैं बहुत जिनरायजी।
बिम्ब अकृत्रिम कहे सेय तसु पायजी॥
मान तजि शीश इन चरणको सुनाइयो।
सो जजों चारि गति माँहि भरमत दह्यो॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीऊर्ध्वलोकसम्बन्धिजिनचैत्य-पद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आदि इन पूज्य थानक बहुत हैं सही।
सिद्ध क्षेत्र मोक्ष फलदाय तीरथ सही॥
मान तजि शीश इन चरणको सुनाइयो।
धर्म मार्दव सु तासु फल मोक्ष पाइयो॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धक्षेत्र-पद-नमन-मार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

मार्दव धर्म मान को खोवै, ताफल जगत पूज्य फल होवै।
मार्दव सकल दोष निरवारै, ताफल आप तिरै अनि तारै ॥१॥
मार्दव धरम इन्द्र सुर पूजैं, मार्दव धरम भजैं अघ धूजैं।
मार्दव मान हरै सुखकारै, ताफल आप तिरैं अनि तारैं ॥२॥
मार्दव धरम महा नर ध्यावै, मार्दव धरम हानि नहिं पावै।
यह मार्दव वृष शिवथल धारै, ताफल आप तिरै अनि तारै ॥३॥
मार्दव सबको राखै माना, मार्दव सब धरमनि में दाना।
मार्दव धरम जीव जे धारै, ताफल आप तिरैं अनि तारै ॥४॥
मार्दव धरम सुरग सुख केरा, उपद्रव नाशि हरै भवफेरा।
मार्दव उत्तम पुरुष सु धारै, ताफल आप तिरैं अनि तारै ॥५॥
मार्दव मोक्षमार्ग को दाता, मार्दव धर्म सकल जग त्राता।
मार्दव वृष गुणवन्ता धारै, ताफल आप तिरैं अनि तारै ॥६॥
मार्दव धरम कल्पतरु भाई, मार्दव मनवांछित फलदाई।
मार्दव धरम मुकुट जो धारै, ताफल आप तिरैं अनि तारै ॥७॥

मार्दव धरम कनक में मीना, मार्दव धारि सकै न कमीना।
मान मार मार्दव वृष धारै, ताफल आप तिरै अनि तारै ॥८॥
मार्दव वृष सब धर्म प्रमाना, मार्दव मोह मल्ल को हाना।
मार्दव-माल पुरुष उर धारै, ताफल आप तिरै अनि तारै ॥९॥

दोहा

मान मार मार्दव करै, हरै पाप मल सोय।
जगत छुड़ावै शिव करै, ते मो रक्षक होय ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

उत्तम आर्जव धर्म पूजा

बेसरी छन्द

जग परपंच रहित जो भावा, सरल चित्त सबतै निरदावा।
तिनको आर्जव भाव सुकहिये, सो ह्यां थापि पूज फल लहिये॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

क्षीर समुद्र का उज्वल नीरा, कनक पियाले धर अति धीरा।
जरा रोग नाशनको भाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व० स्वाहा।

चन्दन बावन जल घसि लाया, कनकपात्र में धरि उमगाया।
शोकानल तप नाशन भाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व० स्वाहा।

अक्षत मुक्ताफल से जानो, उज्वल खण्ड विवर्जित आनो।
क्षय नहिं होय इसो पद दाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० स्वाहा।

फूल सुगन्ध कल्पद्रुम लाया, तथा सुवर्ण रजतमय भाया।
तिनकी माल गूंथि कर लाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा।

नाना रस नैवेद्य करावै, मोदक आदि भक्ति तैं लावै।
भूख व्याधि नाशन को भाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

दीपक रतन थालि धरि लीजै, मन वचकाय शुद्धि कर लीजै।
घाति अज्ञान ज्ञान दरशाई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

धूप अगरजा चन्दन भीनी, गंध सहित निज करमें लीनी।
कर्म दहनको अग्नि जराई, आर्जव भाव नमों शिरनाई॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

ले नरियल बादाम सुपारी, खारिक लौंग आदि हितकारी।
सिद्धलोक वांछा मनमाहीं, आर्जव धरम जजौं शिरनाई॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत कामारी, चरु दीपक फल धूप विथारी।
अर्घ लेय मनवचतन भाई, आर्जव धरम नमौं शिरनाई॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

बेसरी छन्द

गुण छ्यालीस जहाँ प्रभु तेरा, अष्टादश तहाँ दोष न हेरा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव पावै॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीषट्चत्वारिंशत्-गुणसहित-जिनचरणनमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

मुक्त जीव अरहंत थुति कीजै, मन वच कुटिल भाव तजि दीजै।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव पावै॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तजीव-अरहंतपदनमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कर्म काटि शिवलोक सिधारै, सिद्ध सुदेव हरो अघ सारै।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्ध-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

सिद्धशिला पैंतालिस लाखा, योजन विस्तृत जिन वच भाषा।
तत्रस्थित आतम शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धशिलास्थित-मुक्तात्मपदनमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

गुण छत्तीस सुधारक सूरा, आचारज सब गुण भरपूरा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्य-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

आचारज सब गुण भरपूरा, आचारादि गुणन युत सूरा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्य-पद-परोक्षनमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

गुण पचीस उवझाय सु माँही, ग्यारह अंग चौदह पूर्वांही।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीउपाध्याय-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

बहु गुण धर उवझाय सु जानो, दूरहिं तैं तिनको चित आनो।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीउपाध्याय-परोक्ष-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

बीस आठ गुण साधन साधा, सो नहिं लहै जगत की बाधा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीसाधु-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

दूरहितैं मुनि गुण जु चितारै, मनवचकाया निज वश धारै।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुनिपरोक्ष-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

वरणविहीन सु जिनवर वानी, तिनको सुनि सुख पावै प्रानी।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनवाणी-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

अतिशय क्षेत्र सु तीरथ ठामा, यात्री गण के पूरे कामा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीअतिशयक्षेत्र-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

शिखर सम्मेद आदि सिद्धिथाना, तहँ मुनि लिय शिव कर्मनशाना।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धक्षेत्र-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

बिगर किये जिनबिंब अनूपा, लक्षण चिह्न जानि जिन रूपा।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीअकृत्रिमजिनचैत्य-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कृत्रिम जे जिनबिंब विराजैं, विनय सहित पुन दायक छाजैं।
तिनपद सरल भाव शिर नावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीकृत्रिमजिनचैत्य-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

इत्यादिक बहु क्षेत्र सुथाना, पूजनीक तीरथ अघ हाना।
तिनपद सरलभाव शिरनावै, सो आर्जव वृष जजि शिव धावै॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीसकलपूज्यस्थानक-पद-नमन-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

सरल भाव सारै सरस, सुरनर पूज्य महान।
तातैं तजनी कुटिलता, आरजव भाव लहान॥१॥

बेसरी छन्द

सरल भाव समता उर आनै, सरल भाव सब औगुन भानै।
आरजव भाव धरैं जो जीवा, तिनने जिनवानी रस पीवा॥२॥
आरजव भाव धरैं जे प्रानी, तिनके होनहार शिवरानी।
दोषभाव तिनतैं नहिं छीवा, आरजवभाव धरैं जे जीवा॥३॥
आरजव भाव अमर पद ध्यावे, आर्जव में औगुन नहिं पावे।
कुटिल भाव विष जिन नहिं पीवा,आरजवभाव धरैं जे जीवा॥४॥
आर्तभाव आरजव ही खोवै, आरजवभाव पापमल धोवै।
रोग-शोक ताको नहिं छीवा, आरजवभाव धरैं जो जीवा॥५॥
आरजव शुद्ध भाव जिन पाया, तिनने लहि पुन पाप गमाया।
अनुभव आनन्द तानै छीवा, आरजवभाव धरैं जे जीवा॥६॥
आरजवभाव दोष सब खोवै, आरजव कर्म कालिमा धोवै।
शुद्ध सुभाव सु तानै लीवा, आरजवभाव धरैं जे जीवा॥७॥
आरजवभाव सकल को प्यारा, आरजवभाव भ्रमणतैं न्यारा।
ताकों और रुचे न मतीवा, आरजवभाव धरैं जे जीवा॥८॥

आरजव सुर शिव के सुख ठाने, आरजवभाव पूर्व अघ भाने।
अद्भुत आपापर भिन कीवा, आरजवभाव धरैं जे जीवा॥९॥

दोहा

अन्तरंग निरदोष के, प्रगटें आरजभाव।
जाके फल मरनौ मिटै, छुटै कर्म को दाव ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम शौच धर्म पूजा

बेसरी छन्द

शौच धर्म पर-चाह निवारै, ततनै हूँ ममता निखारै।
जग वांछा तजि निर्मल भावा, शौचधर्म पूजौं कर चावा॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

पद्धरि छन्द

जल क्षीरसमुद्र को सुभग लाय, धरि कनकपात्र में भक्ति भाय।
तन धरन मिटै बहुफल सुजान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

घसि बावन चन्दन नीर आन, अलि गुंजन मानों करत गान।
धरि कनक पियाले भक्ति जान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

उज्ज्वल अखंड शुभ गंधदाय, अक्षत अनूप लखि शशि लजाय।
कन-पात्र विषैं धरि भक्ति आन, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

ले फूल कल्पद्रुम के मनोग, आसक्त भ्रमर थित करत भोग।
तिन गूँथि माल उर भक्ति ठान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

शुभ मोदक आदि अनेक भाय, रसनारंजन नैवेद्य लाय।
धरि पुरट थाल में भक्ति ठान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

मणि दीपक वा घृतमय सँजोय, मनुनिविड़ मोहतम नाश होय।
अरु ज्ञान प्रकाश करै महान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

शुभ धूप अगरजा गंध लाय, कन धूपायन ताकों खिवाय।
मिस धूम मनों वसुविधि उड़ान, मैं शौचधर्म जजि हर्ष आन॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

ले फल बिदाम खारक अनूप, अरु पुंगीफल आदिक स्वरूप।
धरि भक्तिभाव मनमाहिं सोय, मैं शौचधर्म जजौं हर्ष होय॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल गंधाक्षत वर-कुसुम होय, चरु दीप धूप फल सुभग जोय।
कर अर्घ धरौं कनपात्र लाय, मैं जजौं शौच वर भक्ति भाय॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

चाल मणुयणानन्द की

देव के सकल सुख जानि चंचलमयी।
आयु पल्य सागर की तुरत ही क्षय गयी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१॥

ॐ ह्रीं देवसुख-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

चाह चक्री तने सुखन की उर नहीं।
सहस छिनवै तिया और षट्खंड मही॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥२॥

ॐ ह्रीं चक्रिपदभोगवांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

खण्ड तीन को जु राज नारि बहु जानिये।
चारि विधि सैन सुर नर खगादि मानिये॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥३॥

ॐ ह्रीं नारायणपदभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कामदेव को सुरूप देखि देव मन हरे।
भोग वांछित सकल देव सेवा करें॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥४॥

ॐ ह्रीं कामदेवपदभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

आठ परकार सपरस विषैं जानिये।
द्रव्य क्षेत्र काल अनुसार भाव मानिये॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥५॥

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

पाँच परकार रस जानि शुभ सारजी।
भोग वांछा सभी जगत दुखकारजी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥६॥

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

घ्राण इन्द्रियतने गंध दो हैं सही।
ताहि अनुकूल पाय जीव साता लही॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥७॥

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

चक्षु इन्द्रियतने पाँच रूप भोग हैं।
ताहि चाहें अमर नाहिं तन रोग हैं॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥८॥

ॐ ह्रीं चक्षुरेन्द्रियभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

राग संगीत इन आदि सुर साजिये।
सप्त स्वर भेद कर्ण भोग मन राचिये॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥९॥

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

भोग वांछित घने चित्त आधारजी।
ताहि सेय जीव सुख लहै अपारजी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१०॥

ॐ ह्रीं मनोवांछितभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

तन अशुचि आपको सु चाम मय जानिये।
सप्त मल धातु पूरित सु घिन आनिये॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥११॥

ॐ ह्रीं तनसम्बन्धीभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

रतन नवधादि भरपूर घर में सही।
कोटि नित दान देते सु क्षय होवे नहीं॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१२॥

ॐ ह्रीं धन-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

रूप में शची समान नारि घर में घनी।
शीश आज्ञा धरै प्रीति रस में सनी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१३॥

ॐ ह्रीं वनिताभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कामदेव के समान पुत्र रूप धारजी।
विनयवान सर्व बलवन्त तेज सारजी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१४॥

ॐ ह्रीं पुत्रभोग-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

भ्रात बहु विनयजुत आनि-पालक सही।
संग तिन भोग भोगि जीव साता लही॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१५॥

ॐ ह्रीं भ्रातृसुख-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

मन्त्र दाता विपति माहिं मित्र सारजी।
प्रेम अन्तरंग धारि नित्य रहें लारजी॥
जानि सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौचधर्म को जु शौच थानक धरै॥१६॥

ॐ ह्रीं मित्रानुबन्ध-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

मित्र तिय पुत्र सब घरतने दासिया।
आदि परिजन सकल और घरवासिया॥
जान सब अथिर उर भाव निर्मल करै।
पूजि शौच धर्मको जु शौच थानक करै॥१७॥

ॐ ह्रीं सकलपरिजनानुकारित्व-वांछाविहीन-शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जयमाला

दोहा

शौच सकल उर सुख करै, हरे लोभ मद सोइ।
मोक्ष धरै मरनो टरै, ताहि जजैं शिव होइ ॥१॥

शौच भावतैं पुण्य बढ़ोई, कटे पाप जगमें जस होई।
शौच भाव संतन को प्यारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥२॥
शौच भाव पर-चाह निवारै, शौच भाव दुख शोक विडारै।
शौच सख को बड़ा सहारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥३॥
शौच साँच के बड़ा सनेहा, शौच मुनिव्रत की इक देहा।
शौच भाव मंगल करतारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥४॥
शौच भाव में नाहिं कषाया, शौच भाव सब जग का भाया।
शौच धर्म का शरण गहारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥५॥
शौच धर्म को मुनिगण सेवें, ताफल स्वयं सिद्ध थल लेवें।
शौच धर्म समता रस धारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥६॥
शौच समान और नहिं मिन्ता, शौच भाव टारै सब चिन्ता।
शौच सदा सब जियका प्यारा, जजौं शौच यह धर्म हमारा ॥७॥

दोहा

शौच सार संसार मं, करै पवित्र जु भाव।
तातैं धारो शौच को, भलो मिलो यह दाव ॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम सत्य धर्म पूजा

अडिल्ल

सत्य सरीखो धर्म जगत में है नहीं।
सत्य धरम परभाव लहै शिव की मही॥
तातैं भव दुख हरण सत्य वृष भाइये।
यहाँ थापि मैं जजौं सत्य मन लाइये ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

त्रिभंगी छन्द

जो झूठ विनाशै जग विसवासै, पुण्य प्रकाशै हितदानी।
सब दोष निवारै समता धारै, शिवपुर कारै गुण थानी॥
जग आदरकारी मोहनिवारी, आनदधारी जग मानो।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, जल ले परमा जजि जानो ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

सत-सों वृष नाहीं या जग माहीं, पूज्य कहाहीं शिव थानी।
सब औगुण धोवै पाप बिलोवै, धर्म मिलावै दुख हानी॥
पावत शिवनारी मुनिजन प्यारी, सुख करतारी भवि मानी।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, गंध ले परमा जजि जानो ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

या सत्य समानौ रतन न आनौ, सम्यक् दानौ शिवकारी।
भवदशि को नावा अशुभ गमावा, सरल स्वभावा दुखहारी॥
सिधलोक नसैनी शिवसुख बैनी, ध्यावत जैनी अमलानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, अक्षत परमा जजि जानौ ॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

सत सौं नहिं मिन्ता मेटत चिंता, अघ-अरि हन्ता जसदाई।
सत जगत पियारो भव उद्धारो, दुख-जम तारो श्रुति गाई॥
याकौ मुनि ध्यावैं शिवसुखपावैं, पाप गमावैं भव हानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, पुष्पं परमा जजि जानौ ॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

सत धर्म सु पूजै सब अघ धूजै, शिवमग सूझे अधिकाई।
यातैं वृष सारा काज सँवारा, अशुभ विहारा सिधिदाई॥

सत सारा नीका सुखदा जीका, शिवमग टीका शुभ आनौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, ले चरु परमा जजि जानौ ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

सत धर्म उजाला जग का पाला, विभ्रम टाला धर्म करा।
यह ज्ञान उजालैं अशुभ सु टालैं, संजम पालैं झूठ हरा॥
सत प्रीति उपावै वैर गमावै, जो थुति लावै उर ज्ञानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, दीपक परमा जजि जानौ ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

सत धर्म प्रभावै मुनि शिव जावै, जगजस गावै थुति लाई।
सत धर्म जु मूला अघ-काय थूला, झूठ कुसूला दह भाई॥
सत धर्म अनूपा शुभ रस कूपा, पुण्य स्वरूपा मग मानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, धूप जु परमा जजि जानौ ॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

सत धर्म अभ्यासौ शिवथल वासौ, पाप विनासौ हितकारी।
गुण ज्ञान बढ़ावै आदर ल्यावै, पुण्य उपावै सत भारी॥
जगमें अति नीका बन्धु जी का, शिवतिय पीका गुण थानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, ले फल परमा जजि जानौ ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल चंदन नीका अक्षत ठीका, फूल चुनीका माल करौं।
चरु दीप सु लाया धूप बनाया, श्रीफल आया अर्घ्य धरौं॥
उर भक्ति बढ़ाई मुख थुति गाई, सत सब भाई पहचानौ।
ऐसौ सत धर्मा काटत कर्मा, अर्घ्यं परमा जजि जानौ ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

चौपाई

क्रोध सहित जिय सत नहिं कहैं, झूठ वचनतैं अघ शिर लहै।
क्रोधरहित जे वचन प्रमानि, सो सतधर्म चयो जिनवानि ॥१॥

ॐ ह्रीं क्रोधातिचाररहित-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

लोभ सहित जिय झूठ बखानि, साँच धरम ताकौ नहिं मानि।
लोभरहित सतधरम सुभाय, सो सतधर्म जजौं थुति गाय ॥२॥

ॐ ह्रीं लोभातिचाररहित-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

साँच न कहै भीतियुत जीव, बोले असत सु वचन सदीव।
भयतैं रहित सत्य वच भाख, सो सत धर्म करो थुति लाख ॥३॥

ॐ ह्रीं भयातिचाररहित-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

हास्य सत्य को नाशनहार, तातैं सहै महादुख मार।
हास्यरहित सब धर्म कहाय, सो सतधर्म जजौं थुति गाय॥४॥

ॐ ह्रीं हास्यातिचाररहित-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जिन आज्ञा बिन भाखै बैन, पूर्वापर वच ठीक कहैन।
ऐसे दोषरहित यति भाय, सो सतधर्म जजौं थुति गाय॥५॥

ॐ ह्रीं जिनाज्ञोलंघनातिचाररहित-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

गीता छन्द

जा देश में जिस वस्तु को तिस मानिये सो सति सही।
जिमि भात को गुजरात-मालवदेश में चोखा कही॥
करनाट में कूलू कहैं द्राविड़ में चौरु बखानिये।
इमि जानि जनपद सत्य को जजि हर्ष उर में आनिये ॥६॥

ॐ ह्रीं जनपद-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

अडिल्ल

बहु नर ताको कहैं तिसो ही मानिये।
रंक नाम लक्ष्मीधर जाहि बखानिये॥
तौ यह रूढ़ी नाम सत्य संवृत कही।
या नयतैं सत जानि जजौं सत वृष सही॥७॥

ॐ ह्रीं संवृत-सत्यधर्माँगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

काहू पर आकार तथा पशु के सही।
चित्र काष्ठ में थापि नाथ नर पशु कही॥

यह थापन सत भेद शास्त्र में गाइयो।
ताकों सत वृष जानि जजौं मन लाइयो॥८॥

ॐ ह्रीं स्थापन-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जाकों जग में नाम प्रसिद्ध बखानिये।
सोई ताको नाम सत्य सो मानिये॥
नाम सत्य सो जानि वानि जिन इमि कही।
ताको मन वच काय जजौं शुभ सुखमही॥९॥

ॐ ह्रीं नाम-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

पीत श्याम अरु रक्त श्वेत गोरा सही।
रूपवान इत्यादिक अंग बहुतैं कही॥
रूपसत्य सो जानि कह्यो जिनवानिजी।
ऐसो सत्य सुजानि जजौं सुखदानजी॥१०॥

ॐ ह्रीं रूप-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कही वस्तु यह यातैं छोटी है सही।
यातैं है यह बड़ी अपेक्षा इमि कही॥
याको नाम प्रतीति सत्य सो जानिये।
ताको भी है जजौं भक्ति उर आनिये ॥११॥

ॐ ह्रीं अपेक्षा-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जो नरपति को पुत्र ताहि राजा कहै।
सो नैगमनय जानि सत्य तातैं लहै॥
यही सत्य व्यौहार जिनेश्वर धुनि कही।
मैं जजिहौं कर भक्ति नाय मस्तक सही ॥१२॥

ॐ ह्रीं व्यवहार-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

शक्ति इन्द्रमें यों हि लोक उलटा करै।
सो तो लोक अनादि उलटि कैसे धरै॥

पै यह शक्ति अपेक्षा वचन प्रमान है।
यह सम्भावन सत्य जजौं थिति आन है॥१३॥

ॐ ह्रीं संभावना-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जीव अनन्त अनादि नजर आवै नहीं।
द्रव्य अमूर्त्ती पाँच नरक सुर की मही॥
ये नहिं दीखैं नयन सूत्रसौं जानिये।
भावसत्य सो जानि जजौं मन आनिये॥१४॥

ॐ ह्रीं भाव-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

किसी वस्तु की उपमा जाको लाइये।
ज्यों दानी नर देख कल्पद्रुम गाइये॥
याकों उपमा-सत्य नाम जानौ सही।
सो मैं पूजौं भक्ति नाय मस्तक मही॥१५॥

ॐ ह्रीं उपमा-सत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

इत्यादिक बहु भेद सत्य के जानिये।
कहे देव जिनराय आपनी वानिये॥
सो मैं मन वच काय शुद्ध थुति गायजी।
पूजौं सत्य सुधर्म अरथ कर लायजी॥१६॥

ॐ ह्रीं सत्यधर्मांगाय महार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

सत्य धरम जग पूज्य बताया, सत्य श्रेष्ठव्रत जिनधुनि गाया।
सत्यधरम भवदधिको नावा, सो सत धर्म जजौं शुभ भावा ॥१॥
सत्य धरम वर अंग प्रवीना, सत्य धरम ज्यों कंचनमीना।
सत्य धर्म का सबको चावा, सो सत धर्म जजौं शुभ भावा ॥२॥
सत्य धरम का राखनहारा, सत्यधरम मुनिजन को प्यारा।
सत्य शिरोमणि धर्म कहाता, सो सतधर्म जजौं शुभ भावा ॥३॥

सत्य समान और नहिं मिन्ता, सत्य धर्म मेटे भवचिन्ता।
सत्य करै अघतैं निरदावा, सो सतधर्म जजौं शुभ भावा ॥४॥
सत्य धरम अपयश क्षयकारी, सत्य सुरक्षा करै हमारी।
सतही का सुरनर जस गावा, सो सतधर्म जजौं शुभ भावा ॥५॥
सत्य सहित सग सार्थक धर्मा, तासों कटै चिरन्तन कर्मा।
सत्य समान और नहिं ठावा, सो सतधर्म जजौं शुभ भावा ॥६॥
सत्य जगत में पूजा पावै, सत्य धरम शिव राह बतावै।
सत्य जजौं सतधर्म लहावा, सो सतधर्म जजौं शुभ भावा ॥७॥
धर्म सरोवर में सत नीरा, सत्यधर्म खोवै सब पीरा।
सत्य धर्मसों कुगति न पावा, सो सतधर्म जजौं शुध भावा ॥८॥

सतसागर में जे रमे, ते वृष नायक जोय।
जजैं धर्म सतको सही, मन वच काया सोय॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम संयम धर्म पूजा

अडिल्ल

संयमधर्म अनूप दोय विधि जानिये।
इक रक्षा षट्काय दया उर आनिये॥
मन इन्द्रिय वश करै दूसरो संयमा।
सो मैं पूजौं थापि लहौं उत्तम रमा॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

बेसरी छन्द

निर्मल नीर भाव कर भीजे, मन मनोज्ञ बासन धरि लीजे।
जिनको जन्म मरण गद जावै, सो संयमवृष जजि शिर नावै ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

चंदन शीतल भावन भाया, तापर मन भंवरा जु लुभाया।
जग आताप तासु नशि जावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

शालि अखंड अखत ले भाई, शुभपरणति भाजन भरवाई।
जो अखंड थानक ले धावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

फूल प्रफुल्लित भाव सु लीजै, भक्ति-तार में माल करीजै।
मदन-बाण-हर सो बल पावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

भाव अवांछित कर नैवेद्यं, नाना रस मय जे निरखेद्यं।
भूख नाशि चित साता पावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान दीप करि भाई, शुद्ध भाव भाजन धरवाई।
ताके फल अज्ञान मिटावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

कर्म आठ मय धूप करीजे, धरम सु ध्यान अगनि खेवीजे।
ताफल दुष्टकर्म नशि जावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम परिणति को फल कीजे, शुद्ध भाव कनथाल धरीजे।
तातैं मनवांछित फल पावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

आठों द्रव्य अमोलिक जानी, प्रासुक भाव सहित हितदानी।
पद अनर्घ्य तासु फल पावै, सो संयम वृष जजि शिर नावै ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

ताल कूप खाई न खुदाय, भूमिकाय तब दया पलाय।
पृथिवीकाय की रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१॥

ॐ ह्रीं पृथवीकायजीव-रक्षणरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अनगालो जल वरतैं नाहिं, नदी तलाब फुड़ावै नाहिं।
जलकायिक जिय रक्षा करै, संयम वृष जजि शिवतिय वरै ॥२॥

ॐ ह्रीं जलकायिकजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अगनि जलावन काज न करै, नांहि बुझावै करुणा धरै।
अगनिकाय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥३॥

ॐ ह्रीं अग्निकायिकजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

पवनकाय की रक्षा सार, पंखा आदि काज नहिं धार।
पवनकाय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥४॥

ॐ ह्रीं वायुकायिकजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

फूल पात तरु तोड़ै नाहिं, वन बागादि लगावै नाहिं।
हरितकाय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥५॥

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिकजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

इल्ली जोंक गिंडोला जान, बाला आदि जीव पहचान।
बे-इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥६॥

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

चींटी कुंथु वा खटमल लीक, जुँआ तिरूला जिय करि ठीक।
ते-इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥७॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

माखी भँवरा टीडी जान, मच्छर आदि जीव पहचान।
चउ-इन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥८॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जीव असैनी बहुत प्रकार, जलचर सर्प आदि निरधार।
पंचेन्द्रिय जिय रक्षा होय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥९॥

ॐ ह्रीं असंज्ञीपंचेन्द्रियजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

नर सुर नारकि सब जिय संज्ञि, तिर्यक्गति में संज्ञि असंज्ञि।
संज्ञी जिय की रक्षा होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१०॥

ॐ ह्रीं संज्ञीपंचेन्द्रियजीव-रक्षणरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

सपरस इन्द्रिय विषय निखार, वीतरागता वरतै सार।
शीत उष्ण उर चाह न होय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥११॥

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रिय-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

रसनेन्द्रिय पाँच भट जान, तिनवश भये सकल गुणखान।
रसनेन्द्रिय के वश नहिं होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१२॥

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रिय-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय के भट दुइ जान, तिन प्रसाद जिय दुःख लहान।
घ्राणेन्द्रिय के वश नहिं होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१३॥

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

चक्षु विषय भट जानों पाँच, ते दुख देय सकल जिय साँच।
चक्षु अक्ष के वश नहिं होय, संयमधर्म जजौं मद खोय ॥१४॥

ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रिय-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कर्णेन्द्रिय शुभाशुभ बैन, ता वश होय सुरासुर ऐन।
शब्द शुभाशुभवश नहिं होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१५॥

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रिय-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

मन चंचल कपि की गति जिसौ, ताकेवश जगजिय दुख फसौ।
मन के वश कबहूँ नहिं होय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१६॥

ॐ ह्रीं मन-विषयवर्जनरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सब जियमें धरि समता भाव, तप संयम करिबे को चाव।
आरत रौद्र भाव नहिं होय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥१७॥

ॐ ह्रीं सामायिकरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जो प्रमादवश संयम जाय, प्रायश्चित ले पुनि थिर थाय।
छेदोपस्थापन है सोय, संयम धर्म जजौं मद खोय ॥१८॥

ॐ ह्रीं छेदोपस्थापनारूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

दोय कोष नित गमन कराय, तन निहार नहिं बहु रिध पाय।
सो परिहार-विशुद्धी जोय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥१९॥

ॐ ह्रीं परिहारविशुद्धिरूप-संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सकल कषाय नाश ह्वै जाय, नाम मात्र कछु लोभ रहाय।
सूक्ष्म-सांपराय है सोय, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥२०॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मसाम्परायरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

सकल मोह नाशै जिसकाल, या उपशमैं मोह जंजाल।
यथाख्यात में रहे न मोह, संयम धर्म जजौं शुचि होय ॥२१॥

ॐ ह्रीं यथाख्यातरूप-संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अडिल्ल

इस प्रकार बहु विधि को संयम जानिये।
शिव सुखदायक होय दया की खानि ये॥
पूरण मुनि के होय धर्म हितदाय जी।
ताहि जजौं मैं अर्घ थकी यश गायजी॥२२॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय महार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जयमाला

बेसरी छन्द

संयम सार जगत में भाई, संयम तैं जिय शिव सुख पाई।
संयम सबका राखनहारा, संयम है शिरताज हमारा ॥१॥
संयम सकल जीव सुखदाई, संयम जगत जीव बड़ भाई।
संयम जगत गुरुनिका प्यारा, संयम है शिरताज हमारा ॥२॥
पूरण संयम मुनिजन पावैं, संयम तैं ही शिवमग धावैं।
संयम अघनाशन असिधारा, संयम है शिरताज हमारा ॥३॥
संयम सर्व मुकुट धर धारैं, संयम तैं विषधर डर हारैं।
संयम जामन मरण हमारा, संयम है शिरताज हमारा ॥४॥
संयम के सब दास बताये, संयम बिना जगत भरमाये।
संयम मोह सुभट को मारा, संयम है शिरताज हमारा ॥५॥
संयम मन का जीतनहारा, संयम इन्द्रिय रोग निवारा।
पाप-बेलि को नाशनहारा, संयम है शिरताज हमारा ॥६॥
संयम जग-विरक्त जिय भावै, संयम को मुनिजन जस गावै।

संयम धर्म बहू अघजारा, संयम है शिरताज हमारा ॥७॥
संयम भवसागर नवका-सी, संयम धरि जिय शिवपुर जासी।
संयम कर्म कलंक निवारा, संयम है शिरताज हमारा ॥८॥
संयम जग का बन्धु है, संयम मातरु तात।
संयम भव भव शरण है, नमों टेक अघ जात ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम तपो धर्म पूजा

अडिल्ल

अन्तर बाहर भेद कहे तप सारजी।
दुविध भाव परकार करन भव-पारजी॥
तप बारह परकार कर्म-गज केहरी।
मैं पूजौं इस थान जानि नित शुभ घरी॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

चौपाई

भवजलतरण नाव तप भाव, करि अघ नाश जु देव उछाव।
ऐसो तप निर्मल जल लाय, पूजौं जामन मरण नशाय ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

त्रिभुवन में तप तिलक समान, याको मुनि धारैं हित ठान।
तपहर चन्दन सुभग मंगाय, मैं पूजौं भव तप नशि जाय ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

बेसरी

तपतैं निरत लखे बहुतेरे, तपको जपें जु साहब मेरे।
ऐसो तप अक्षत शुभ आनो, पूजौं फल अक्षय उपजानो ॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

पद्धरी

यह तप त्रिभुवन में पूज्य सार, यह तप नाना मंगल सु धार।
ऐसो तप बहु शुभ फूल लाय, मैं पूजौं तसु फल मदन जाय ॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोमधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा।

तप सुर वांछै पै नाहिं पाय, तातैं सुर पूजैं तप सुभाय।
ऐसो तप चरु ले भक्ति लाय, मैं पूजौं तसु फल क्षुधा जाय ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० स्वाहा।

तप कल्पवृक्ष वांछित सुदेइ, तप दीप अनूपम तम हरेइ।
ता तप को दीपक रतनलाय, मैं पूजौं तसु फल ज्ञान पाय ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व० स्वाहा।

तपही तैं तीर्थंकर जु होय, तपही तैं शिव लहि कर्म खोय।
ऐसे तप को शुभ धूप लाय, मैं पूजौं विधि ईंधन जराय ॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० स्वाहा।

तप पूजत जग करि पूज्य होय, तप औषधि दुखगद हरन जोय।
ता तपको बहुविधि फल मंगाय, मैं पूजौं तसु फल शिव लहाय॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा।

तपतैं उर करुणाभाव होय, तप तपैं जगत में पूज्य सोय।
ता तप को उत्तम अर्घ लाय, मैं पूजौं पद अनरघ लहाय ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

गीता

तप सार जग में भेद बारह भव उदधि को नाव है।
पाप दाहक तप करन हित साधु मन उच्छाव है ॥
तप देय सुख दुख, दूरि करि है, और कहूँ लग गाइये।
इमि जानि पूजौं अर्घ लेकर, तासु फल शिव जाइये ॥१॥

ॐ ह्रीं द्वादशविध-उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

बेसरी छन्द

जिन-गुण-सम्पति है तप मीता, त्रेसठ वास होय जिन गीता।
भिन-भिन तिथियन में सुखदाई, यह तप अनशन जजि गुणगाई॥२॥

ॐ ह्रीं जिनगुणसंपत्ति-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कर्म क्षपण तप के उपवासा, इकसौ अड़तालिस जिन भाषा।
भिन-भिन तिथियन में सुखदाई, यह तप अनशन जजि गुणगाई॥३॥

ॐ ह्रीं कर्मक्षपण-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

चाल जोगीरासा

सिंह निःक्रीड़ित तप दिन सौ, अरु जान सतत्तरि भाई।
तिनमें इकसौ जानि पैंतालिस वास कहै सुखदाई॥
बाकी बत्तिस जानि पारणा, यह विधिजिन धुनि माँहि।
यह अनशन तप जानि जजौं, मैं अर्घ लेय हित ठाहीं ॥४॥

ॐ ह्रीं सिंहनिष्क्रीड़ित-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सर्वतोभद्र तपस्या के दिन एक सैकड़ा जानों।
हैं उपवास पचत्तर अद्‌भुत पारण पचविस मानों॥
इसकी विधि भिन-भिन जिन भासी सो तप अनशन गाया।
अर्घ लेय मैं पूजों मन वच काय भक्ति जुत भाया ॥५॥

ॐ ह्रीं सर्वतोभद्र-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

महा सर्वतोभद्र बड़ो तप दिन दोसै पैताली।
इकसौ छिनवे वास कहे जिन पारण गिन नव चाली॥
ताकी विधि जिनशासन में लखि विधिजुत करता भाई।
यह अनशन तप जानि जजौं मैं अर्घ लेय हितदाई ॥६॥

ॐ ह्रीं महासर्वतोभद्र-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

लघु निष्क्रीड़ित के दिन जिन धुनि बीसी चार कहे हैं।
तिनमें बीस जु कहे पारणा साठि उपास लहे हैं ॥
करने की विधि जिन धुनि में लखि ताको करिये भाई।
यह तप अनशन जानि जजौं मैं अर्घ आनि सुखदाई ॥७॥

ॐ ह्रीं लघुनिष्क्रीड़ित-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

बेसरी छन्द

नव पारण उपवास पचीसा, दिन चौतीस कहे जगदीशा।
मुक्तावलि तप विधि जिन गाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई॥८॥

ॐ ह्रीं मुक्तावलि-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

मास मास के छह उपवासा, एक वरष दुइ सत्तरि खासा।
यह कनकावलि विधिश्रुतगाई, यह तप अनशन जजि सुखदाई॥९॥

ॐ ह्रीं कनकावलि-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सो अनशन पारन उनईसा, इकसौ उनइस दिन शुभ दीसा।
जिनभाषित आचामल भाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई॥१०॥

ॐ ह्रीं आचाम्ल-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

चौबिस वास पारना चौई, सब दिन अड़तालीस गिनोई।
तपजु सुदर्शन विधि श्रुत जानो, यह अनशन तप जजि सुखदानो॥११॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

एक वरष तक वास करंता, उत्तम तप जिनवाणि भणंता।
ताके भेद बहुत हैं भाई, यह अनशन तप जजि सुखदाई ॥१२॥

ॐ ह्रीं अनशन-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

भूख प्रमाण थकी लघु खइये, सो अवमौदर तप बरनइये।
यह तप विधि भूधर[1] पवि[2] माना, सो मैं जजौं अर्घकर आना॥१३॥

ॐ ह्रीं अवमौदर्य-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

आज इसी विधि भोजन पइये, तो हम लेय नतर थिर रहिये।
ऐसी विधि परतिज्ञा ठानै, सो तप जजौं कर्म गिरि भानै॥१४॥

ॐ ह्रीं व्रतपरिसंख्यान-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

त्यागै इक दुइ त्रय रस भाई, चार पाँच षट् तजि करि खाई।
ऐसो रस परित्याग सु ठानै, सो तप जजौं कर्म गिरि भानै॥१५॥

ॐ ह्रीं रसपरित्याग-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

1.भूधर-पर्वत। 2.पवि-वज्र।

आसन दिढ़ भू सोधि करावै, थिरता भजै सु तन न हिलावै।
शय्यासन तप या विधि ठानै, सो तप जजौं कर्म गिरि भानै॥१६॥

ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासन-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

काय कसै मन आनंद पावै, सो तप काय-कलेश कहावै।
शोक हरै सुख करै महानो, सो तप जजौं कर्मगिरि भानो॥१७॥

ॐ ह्रीं कायक्लेश-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

अडिल्ल छन्द

मुनि को जो परमादवशी दूषण लगै।
तत्क्षण गुरुपै जाय जु प्रायश्चित मंगै॥
जो आचारज दण्ड देय सो लेय ही।
तप प्रायश्चित जजौं अर्घ शुभ देय ही॥१८॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चित-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

देव धर्म गुरु और थान जो पूज हैं।
तीरथ अतिशय सिद्धक्षेत्र अघधूज हैं॥
तिनकी विनय अनूप करे तजि मानजी।
सो तप विनय विचार जजौं शिवदानजी॥१९॥

ॐ ह्रीं विनय-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जो मुनि को मन चलत तथा तप करत ही।
उपजै तन में खेद कर्मबलतैं सही॥
तो मुनि के करि पांव चम्पिये जो सुधी।
सो तप वैय्यावृत्य जजौं नाशक कुधी॥२०॥

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जिन धुनि बांचै सुनै हरष करि चिंतवै।
धरि जिनकी आम्नाय पाप मलको चवै॥
सो तप है स्वाध्याय ज्ञान उर लावनो।
सो यह तप मैं जजौं स्वर्गसुख पावनो॥२१॥

ॐ ह्रीं स्वाध्याय-तपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

काय ममत को त्याग यतीश्वर थिति करै।
काय त्याग तप धार कर्म अरि मद हरै॥
तप व्युत्सर्ग महान जान मनभानो।
सो मैं पूजों अर्घ धारि कर पावनो॥२२॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

मन वच काया एक थान थिरि लाइये।
आरत रौद्र कुभाव सबै ही ढाइये॥
या वपुतैं जिय भिन्न शुद्ध जानै सही।
सो तप ध्यान अनूप पूजि लूँ शिवमही॥२३॥

ॐ ह्रीं ध्यान-तपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

इमि धारि तप के भेद बारह सकल कर्म विनाशियो।
यह कर्म भूधर नाश कारण वज्रसम जिन भाषियो॥
जे जीव चाहें तरन भवदधि, ते लहैं तप सारजी।
हम शक्तिहीन न कर सकत, तातैं जजैं उर धारजी॥२४॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय महार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अथ जयमाला

दोहा

तप तारै भव उदधिसौं, टारै पाप असाधि।
धरै महासुख थल विषैं, देहै ध्यान समाधि॥१॥

बेसरी छन्द

तप ही सार धरम है भाई, तप ही तैं मुनिवर शिव पाई।
सिद्धक्षेत्र जे सिद्ध सधे हैं, ते सब पहले तपहि भजे हैं ॥२॥
तप भव उदधि धरण नवकाया, तप को जस गणधर ने गाया।
ये तपही जगजिन सुखदाई, तात मात स्वामी तप भाई ॥३॥
तप को तो तीर्थंकर ध्यावैं, तप बिन मोक्ष कभी नहिं पावैं।
तप शिव महल तनों मगजानो, तप ही तैं सब कर्म हरानो ॥४॥

तप-सा तीर्थ और नहिं कोई, तपही तारन सब विधि होई।
तप शिव वाट दिखावन दीवा, तपही तैं सुख होय अतीवा ॥५॥
तपतैं इन्द्री मन-भट हारै, तप निज बलतैं मोह निवारै।
तप को कायर जिय नहिं पावै, तप को महत पुरुष उमगावै ॥६॥
अविचल तपतैं सुख बहु होई, तपतैं लच्छि अखैं पुनि जोई।
तपतैं खानपान परमाना, तपही तैं रस बिन सब खाना ॥७॥
दिढ़ आसन तन तपतैं जानों, काय कष्टतैं जिय सुख जानों।
तप ही लगे पाप को धोवै, तपतैं विनय भाव उर होवै॥८॥
धरमी काय तनी सुश्रूषा, तप ही करवावे अघ-लूसा।
शास्त्र पठन है तप सुखकारा, यातैं होवै वपुतैं न्यारा॥९॥
तप ही मन इन्द्रिय वश आनै, ध्यान धरत वसु कर्म हरानै।
यातैं तप लागत हैं प्यारा, शुद्ध भावतैं ह्वै अघ छारा॥१०॥

तप मेटत भव ताप को, शान्त भाव दिढ़ होय।
हरै भरम देवै धरम, सो तप पूजौं लोय ॥११॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम त्याग धर्म पूजा

चौपाई

त्याग धरम में ममत न कोई, त्याग धरम सुरतरु अवलोई।
वांछा, त्याग धरम में नाहीं, सो वृष थापि जजौं इस ठाहीं ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

नीर शुभ क्षीरदधि सार सो लायजी।
साधु चित तुल्य निर्मल सुमन भायजी॥
कनक झारी भरी भक्ति मन लाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

चन्दनादि गन्ध सार नीर में रलाइयो।
अमर सौरभ थकी भक्ति भरमाइये ॥
कनक झारी भरी भक्ति मन लाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व० स्वाहा।

तन्दुलं समुज्वलं जु अक्षतं सुहायजी।
खण्ड बिन सोहने विलोकि हरषायजी॥
थाल कंचन भरौं भाव शुभ लाइये।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० स्वाहा।

पुष्प नाना प्रकार गन्धजुत सारजी।
कल्पवृक्षादि के हेम थाल धारजी॥
माल करि सोहनी भक्ति उर लाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागमधर्माङ्गाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा।

लाय नैवेद्य बिन खेद अति सोहना।
मोदकादि सरल सार धार मन मोहना॥
स्वर्ण भाजन विषैं भक्ति भर लाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० स्वाहा।

रत्नमय दीप कर ज्योति परकाशिया।
मोह अन्धकार तासु तेजतैं विनाशिया॥
हेमथाल धारि भक्तिभाव चित्त लाइया।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व० स्वाहा।

धूप दश गन्ध की सार सौरभ भरी।
चन्दनादि ले कनक धूप-आयन धरी॥
अग्नि संग खेय मिस धूप विधि जाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

श्रीफलं सु लौंग पुंगीफल जु सारजी।
खारका बदाम नारियल सु मनहारजी॥
धारि स्वर्णपात्र में सु भक्ति उर लाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

नीर गन्धाक्षतं पुष्प चरु सारजी।
दीप अरु धूप फल अर्घ मनहारजी॥
भक्ति भाजन विषैं धारि चढ़वाइयो।
त्याग धर्म जजौं स्वर्ग-शिव-सुख दाइयो॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

चाल मणुयणानन्द की

कामदेव के समान काय सुन्दर घनी।
सुभग आकार मनुदेव तनसी बनी॥
जानि पुद्गलीक जिमि चपल चंचल सही॥
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥१॥

ॐ ह्रीं तनममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

मात रज मेल मिलि कर्मवश थायजी।
गर्भ से रह्यो सु मास नव दुःख पायजी॥
दूध मांगे बिना न देइ निज मातही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥२॥

ॐ ह्रीं जननीममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जनक वीरज थकी आप मैलो भयो।
कालपाय ह्वै जुदा न संग ताको ह्यो॥
कौन काको भयो सर्व स्वारथ सही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥३॥

ॐ ह्रीं पितृममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

पुत्र रूपवन्त पूर्व पुण्यतैं लहाइये।
पाप के विपाक से सुशील नशि जाइये॥
मोहवश होय जिय लहै दुःख धाम ही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥४॥

ॐ ह्रीं पुत्रममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

पाप साजि राज काज भाग्यतैं लहाइये।
तासु रक्षोपहार में स्व-तन गमाइये॥
भोग परिजन करैं आप शुभ्र धाम ही॥
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥५॥

ॐ ह्रीं राज्यममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

रत्न सुवरण रजत आदि धन पाइये।
घोटका विमान वाहनादि हू लहाइये॥
जानि चपला समान अथिर दुःख धाम ही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥६॥

ॐ ह्रीं धनवाहनादिममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

सहस छिनवै तिया जानि अपछर जिसी।
विनय भरपूर रूपरंग रंभा जिसी॥
जानि सम्पति सकल पाप विपदा मही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥७॥

ॐ ह्रीं स्त्रीममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

संग परिजन मनो हाट मेलो बनो।
धर्मशाला विसैं तीर्थयात्री मनो॥

जानि गृह मोह की सांकली है सही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥८॥

ॐ ह्रीं गृहकुटुम्बममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

मूल वसु कर्म को कषाय भाव मानिये।
तास के प्रसंग चार योनि में भ्रमाइये॥
सकल संसार का भार यह ही सही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥९॥

ॐ ह्रीं कषायभाव-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

राग अरु द्वेष दोय मोह विधितैं बने।
तासु वश जीव जगमें लहै दुख घने॥
पाप पुण्य को प्रसार तासुतैं ही सही।
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥१०॥

ॐ ह्रीं रागद्वेष-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

मात सुत नारि धन राज तन सारजी।
राग अरु द्वेष सर्व दुःख कर्त्तारजी॥
पाप पुण्य धारि संसार दुःख धाम ही॥
मोह तजि तासुको सु पूजि त्याग शिव लही॥११॥

ॐ ह्रीं सर्वममत्व-त्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

त्याग तरण तारण सही, भवसागर में नाव।
त्याग बने नहिं देवपै, मनुज लह्यो यह दाव॥१॥

बेसरी छन्द

त्याग जोग सबही संसारा, पुद्गल द्रव्य त्याग निरवारा।
त्याग रतन कंचन भण्डारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥२॥
हाथी घोटक रथ सब त्यागा, साधु आप आतम रस लागा।
माम ततैं नेह निवारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥३॥

त्याग राज बन्धन दुखदाई, नारि पुत्रतैं नेह तुड़ाई।
अनुभव रा मारग विस्तारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥४॥
आरत ध्यान त्यागि दुखदाई, त्याग योग्य सब मान बड़ाई।
रौद्र ध्यान त्यागै अधिकारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥५॥
क्रोध मान छल लोभ गमावै, सो उत्कृष्ट त्याग कहावै।
हास्य शोक भय भाव निवारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥६॥
मद मत्सर को त्याग कराया, त्याग अरति रति विसन बताया।
राग द्वेष का तजै प्रसारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥७॥
परमें ममत त्यागिकै भाई, निज परिणति में प्रीति लगाई।
त्याग पाप परिणति की धारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥८॥
जगतैं विरति आप रस भीना, तिनने शिवमग नीकेचीना।
त्याग जगत दुःखतैं निरभारा, जो त्यागै सो गुरु हमारा ॥९॥

सोरठा

त्याग धरम तप सार, भव भव शरणो मैं गह्यो।
जजौं त्याग भवतार, ता प्रसादतैं शिव लह्यो॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजा

अडिल्ल

आकिंचन वृष नगन अवस्था है सही।
तामें दुविध परिग्रह त्याग सु धुनि कही॥
धन धान्यादिक बाह्य राग अन्तर गिनो।
इनतैं रहित सु नगन धरम जजि अघ हनो॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

अष्टक

त्रिभंगी

जल लाया नीका सुतरणी का, उज्वल ठीका धार करी।
अति गंध सुहाई निर्मल भाई, हर्ष बढ़ाई पाप हरी॥
ले कनक सुझारी भक्ति उचारी, भव दुखहारी हाथ लई।
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व० स्वाहा।

शुभ चन्दन आनी घसि संगपानी, गन्ध सुहानी हाथ धरी।
अलि ऊपर आवै बासु लुभावै, शुद्ध करावै नेह भरी॥
ऐसी गन्ध लाओ हरष बढ़ाओ, ज्ञान जगाओ मोक्ष मही।
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व० स्वाहा।

शुभ अक्षत लाया विमल सुहाया, खंड बिन भाया सुखदाई।
मुक्ताफल जानौ अधिक सुहानौ, गंध सु थानौ गह भाई॥
ऐसो ले अक्षत जनमन हर्षत, भक्ति करन्ते शिर नाई।
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० स्वाहा।

ले फूल सु प्यारा गन्ध भरारा, वर्ण अपारा शोभ घने।
नाना आकारा अलिगण धारा, सुद्रुम सारा जेम ठने॥
ले कुसुम जु आया माल बनाया, नेह लगाया भक्तिमयी॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यमधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा।

नाना रस आने अधिक सुहाने, षट्विधि जानै सुखदाई।
शुभ मोदक कीने हाथ सु लीने, मधु रस भीने चरु लाई॥
धरि कंचन थाला भक्ति विशाला, कह गुणमाला ज्ञानमई॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० स्वाहा।

मणि दीपक नाना तेज महाना, मोह नशाना ज्ञानकरा।
धरि कंचन थारी भक्ति उचारी, अर्थ अपारी पाप हरा॥
मिथ्या-तम धोवै गुणमणि पोवै, शिवमगजोवै ज्योतिमयी॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

दश गंध मिलाई धूप बनाई, अधिक सुहाई सुखकारी।
मलयागिरि डारा अगर सुधारा, अलि गुंजारा मदधारी॥
ऐसी करि लीनी धूप नवीनी, भक्ति सुभीनी भावमयी॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

फल लौंग सुपारी श्रीफल भारी, भक्ति भरारी गह आनौ।
फिर लाय बदामा खारिक ठामा, वांछित कामा फल जानौं॥
ऐसो फल लायो अति हरषायो, मुख गुन गायो पुण्य लही॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल चंदन लाया अक्षत भाया, फूल मंगाया चरु जु धरी।
ले दीपक थारा धूप अपारा, श्रीफल धारा अर्घ करी॥
बहु द्रव्य जु लाये भक्ति बढ़ाये, ज्ञान सु पाये ध्यान लही॥
आकिंचन धर्मा जजि शुभ कर्मा, दे फल परमा थान सही ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

चाल मणुयणाणंद की

सर्व जग है अथिर, ध्रौव्य नहिं मानिये।
तात माता तिया भ्रात सुत जानिये॥
चक्रवर्ती तने भोग क्षय जायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥१॥

ॐ ह्रीं अनित्यरूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

आयु पूरन भये शर्ण नहिं कोयजी।
औषधी मन्त्र बल तन्त्र बहु होयजी॥
देव खग शर्ण नहिं मर्ण दिन आयजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥२॥

ॐ ह्रीं अशरणरूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अन्यतैं प्रीति संसार सो है सही।
या थकी राग अरु द्वेष उपजै मही॥
राग रुच चारि गति माँहि दुखदायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥३॥

ॐ ह्रीं संसाररूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जीव एकहि फिरै चार गति आपही।
एक भोगै सदा पुण्य या पापही॥
कोउ नहिं दूसरो आप दुःख पायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥४॥

ॐ ह्रीं एकत्वरूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

सर्व द्रव्य भिन्न कोई मिले न जानिये।
नीर क्षीर के समान जीव देह मानिये॥
जानि इमि साधु निर्ग्रन्थ सुख पायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥५॥

ॐ ह्रीं अन्यत्वरूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

देह में पवित्र वस्तु एक नहिं पाय है।
सप्त धातू भरी द्वार नौ बहाय है॥
जीव निर्मल महा शुद्ध चेतनायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥६॥

ॐ ह्रीं अशुचिरूपोत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

जोग मिथ्यात्व अव्रत कषाय जानिये।
और परमाद भाव कर्म आठ मानिये॥

त्यागि दुर्भाव साधु शुद्ध रूप ध्यायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥७॥

ॐ ह्रीं आस्रवरूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

अन्यतैं विरक्त ह्वै जु आपरूप ध्यावही।
राग द्वेष को विहाय शुद्ध तत्त्व पावही॥
भाव संवर यही जानि सुखदाय जी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥८॥

ॐ ह्रीं संवररूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

पाप पुण्य भावतैं जु कर्म बन्ध ह्वै सही।
शुद्धता प्रभाव कर्म जाय निर्जरा लही॥
जानि इस भाँति बिनराग पद ध्यायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥९॥

ॐ ह्रीं निर्जरारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

तीन लोक नित्यरूप जानि नराकारजी।
चार गति घूमि जीव दुःख ले अपारजी॥
लोक को स्वरूप जानि आत्मतत्त्व ध्यायजी॥
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥१०॥

ॐ ह्रीं लोकरूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

वस्तु को स्वभाव धर्म जीव रक्षा कही।
दर्श बोध आचरण जु रत्न तीनों सही॥
चारि विधि दान अरु धर्म दश ध्यायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥११॥

ॐ ह्रीं धर्मरूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

गैर वस्तु को जु है सुलभ अपनावना।
ज्ञान निधि आपनी न सहज ही लहावना॥
ताहि पाय साधु शुद्ध आत्मरूप ध्यायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी ॥१२॥

ॐ ह्रीं बोधिदुर्लभ-रूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

भ्रात सुत नारि गज घोटकादि भाइ है।
दास दासी पिता सुतादि परिजनाइ हैं ॥
संग चेतन तजो जानि दुःखदायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी ॥१३॥

ॐ ह्रीं चेतनरूप-बाह्यपरिग्रहत्यागाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

रत्न कंचन रजत ठाम वस्तर सही।
महल वन बाग बहुग्राम युत शुभ सही॥
संग निर्जीव छांड़ि शुद्ध रूप ध्यायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥१४॥

ॐ ह्रीं अचेतनरूपबाह्यपरिग्रहत्यागाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

अन्तरंग संग राग आदि अरु द्वेष है।
या थकी जीव लहै चार गति क्लेश है ॥
जानि यह अन्तरंग संग छुड़वायजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥१५॥

ॐ ह्रीं अन्तरंगपरिग्रहत्यागाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

नग्न रूप धारिकेजु संग दुविधा तजै।
नेह देह को जु छोड़ि आन थिरता भजै॥
ता प्रसाद भक्ति माहिं ही रहै न आयजी।
धर्म आकिंचना पूजि भक्ति भायजी॥१६॥

ॐ ह्रीं विविधपरिग्रहत्यागाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

आकिंचन इस जीव को, मिल्यो न शिवमग पाय।
अब मैं पूजौं नग्न पद, फल यह मोह मिटाय॥१॥

बेसरी छन्द

आकिंचन वृष दुर्धर जानो, याकों धारि सकै न अयानो।
ज्ञानी तो यामें रुक जावै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥२॥

वांछा रोग जासु उर नाहीं, सो आकिंचन धरम धराहीं।
विषय भिखारी जीव न पावै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥३॥
आकिंचन्य जगत जिय प्यारा, जो धारै सो गुरु हमारा।
परिग्रहधारी ताहि न वापै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥४॥
आकिंचन्य इन्द्र सुर सेवैं, ता प्रसाद निज आतम बेवैं।
लोभी जन यातैं डर जावै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥५॥
आकिंचन वृष मोह निधाना, याहीतैं ह्वै केवलज्ञाना।
तन धन रंचक याहि न पावै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥६॥
आकिंचन हाथी का मारा, विषयी जीव सुसा किम धारा।
रागी नाम सुनत मुरझावै, वीतराग ह्वै धरम निभावै ॥७॥
आकिंचन धरम गढ़ नीका, ता बल ध्रौव्यराज ह्वै जीका।
हम या व्रत को शीश नवावैं, साधूजन गहि शिवपुर जावैं ॥८॥

आकिंचन जो आदरै, शिव पहुँचावै सार।
और सकल कर्मनि छुटै, इमि लखि गहु वृष सार॥९॥
आकिंचन को सेवतैं, नशै करम बटमार।
पूजौं मैं आकिंचना, ज्यौं पाऊँ भव पार ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

ब्रह्मचर्य धर्म पूजा

अडिल्ल

नारि देव नर पशू काष्ठ चित्रामकी।
ब्रह्मचर्य-व्रतधारिन के नहिं कामकी॥
मन वच काया मात सुता भगिनी गिनैं।
ऐसो व्रत ब्रह्मचर्य पूजि हम अघ हनैं॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्।

त्रिभंगी छंद

ले निर्मल पानी अति सुखदानी, उज्वल आनी गंग तनो।
धरि कनक सु झारी मन-हरकारी, निज करधारी हरष ठनौं॥
करि भक्ति सु लाऊँ अति गुण गाऊँ, पुण्य बढ़ाऊँ सुखदाई।
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व॰ स्वाहा।

ले बावन चन्दन दाह निकंदन, अगर घिसन्दन नीर करी।
तिस गंध लुभाया षट्पद आया, गुंज कराया हर्ष धरी॥
शुभ गन्ध मंगायो पात्र धरायो, बहु महकायो सुखदाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व॰ स्वाहा।

ले अक्षत चोखे लखि निरदोषे, उज्वल धोके हित धारी।
मुक्ताफल जैसे गन्धित तैसे, दीरघ जैसे जो भारी।
निर्मल जु अखंडित सौरभ मंडित, शशिमद खंडित सुखदाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व॰ स्वाहा।

बहु फूल जु लाया गंध लुभाया, रंग सुहाया सुखखानी।
तसु माल बनाई सुभग सुहाई, अलिगण भाई मनमानी॥
मैं निज कर लायो हरष बढ़ायो, जिन गुण गायो सुखदाई।
जजि ब्रह्म जु चारी वरि शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यमधर्मांगाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व॰ स्वाहा।

नैवेद्य सु नीका रसजुत ठीका, सुखदा जीका गुण थानो।
करि मोदक लाया मधुर सुहाया, थाल भराया थुति गानो॥
जिन अग्र चढ़ाऊँ मुख गुण गाऊँ, अनि हरषाऊँ सुख पाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व॰ स्वाहा।

मणि दीपक करिया तिमिर सुहरिया, ज्योति सुधरिया तेजखरा।
धरि थाल सु लाया हरष बढ़ाया, अति गुण गाया नेह धरा॥
मैं करौं आरती गाय भारती, धर्म सारथी शिवदाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्व॰ स्वाहा।

करि धूप पिपारी दशविधि धारी, गंध अपारी मनमानी।
शुभ चन्दन डारा अगर अपारा, द्रव्य सु प्यारा बहु आनी।
अपने कर लाया नेह लगाया, अगनि जगाया जस गाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व॰ स्वाहा।

ले लौंग बिदामा श्रीफल कामा, खारिक ठामा हम लाये।
पुंगीफल आदी बहुफल स्वादी, भक्ति अपारी सुख पाये॥
भरि थाल अपारा शिवफलकारा, पाप विडारा सुखदाई॥
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व॰ स्वाहा।

जल चन्दन लाया अखिल सु भाया, फूल मिलाया गंध भारी।
चरु दीपक आनों धूप दहानों, फल अधिकानों शिवकारी॥
वसु द्रव्य मंगाई अर्घ बनाई, भक्ति बढ़ाई शिवदाई।
जजि ब्रह्म सु चारी वर शिवनारी, आनंदकारी थिर थाई ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

प्रत्येकार्घ्य

तिया वास तहँ वास न कीजै, अपना शील भाव रख लीजै।
सकल नारि जननी सम जोवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१॥

ॐ ह्रीं स्त्रीसहवास-वर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

नारी तन रतिभाव न देखै, हाव-भाव बिभ्रम नहिं पेखै।
शील धर्मतैं निज सुख जोवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥२॥

ॐ ह्रीं स्त्रीमनोहरांगनिरीक्षण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

राग वचन कबहूँ नहिं बोलै, निज वच जिनवाणी सम तोलै।
राग वचन सूं प्रीति न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥३॥

ॐ ह्रीं रागवचन-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

पूरव भोग किये न चितारै, सो ही शील भाव उर धारै।
रागभाव तजि निज रस जोवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वभोगानुस्मरण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

काम उदीपक अशन न खावै, षट्रस माँहिं न जिय ललचावै।
निशदिन शील भावना होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥५॥

ॐ ह्रीं वृष्येष्टरस-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

तन शृंगार नहीं मन भावै, भूषित देखि नहीं हरषावै।
शीलभरण विभूषित होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै॥६॥

ॐ ह्रीं स्वशरीरशृंगार-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

नारी की शैय्या नहिं पोढ़ै, कपड़ा नारि तनो नहिं ओढ़ै।
शील विरत जाके दिढ़ होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥७॥

ॐ ह्रीं शय्यासन-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कबहूँ न काम कथा मन आई, विकथा काननतैं न सुनाई।
ताके मदन चाह नहिं होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥८॥

ॐ ह्रीं कामकथा-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

पूरण उदर अशन नहिं खावै, ऊनोदर में चित्त रमावै।
शील पालना ताके होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥९॥

ॐ ह्रीं उदरपूर्णाशन-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

नवधा शील धरै जो कोई, ताके ब्रह्मचर्य व्रत होई।
इस व्रततैं भव तरनों होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१०॥

ॐ ह्रीं नवधाशीलपालनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कामदेव वश तन तप होई, जिमि तरु होय तुषार दसोई।
यह शोषण शर काम न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥११॥

ॐ ह्रीं शोषणकामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

कामबाण जाके मन माहीं, मन संताप रहै अधिकाहीं।
कामबाण संताप न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१२॥

ॐ ह्रीं सन्ताप-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कामबाण उच्चाट करावै, रहै उदास कछु न सुहावै।
उच्चाटन शर काम न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१३॥

ॐ ह्रीं उच्चाटन-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कामीजन को काम सतावै, ता वश ताहि न कछु सुहावै।
वशीकरण शर बाण न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१४॥

ॐ ह्रीं वशीकरण-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

कामदेवतैं गहल जु होई, सुधि बुधि ताहि रहै नहिं कोई।
सो मोहन शर काम न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१५॥

ॐ ह्रीं मोहन-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

ये शर काम कहे लौकीका, सबतैं बड़े मोह रिपु जी का।
जहँ ये पाँच बाण नहिं होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१६॥

ॐ ह्रीं पंचप्रकार-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

रूप तिया को लखि मुलकावै, वृथा पाप शिर माहिं चढ़ावै।
ये शर ताके माँहि न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१७॥

ॐ ह्रीं मुलकन-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

बार-बार तिय देखन चाहै, जाके उर अवलोकन दाहै।
जाके उर यह शर नहिं होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१८॥

ॐ ह्रीं अवलोकन-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

ये चाहै पै ताहि न भावै, हास्य वचन कहि ताहि रिझावै।
यह शर काम तहाँ नहिं होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥१९॥

ॐ ह्रीं हास्य-कामबाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

परगट वचन कहन नहिं पावै, सैन करै तिय जिय ललचावै।
जाके यह शर काम न होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै ॥२०॥

ॐ ह्रीं इंगितचेष्टावर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

काम कुटिल जब अधिक सतावै, मिलै तिया नहिं प्राण गमावै।
ये शर काम जहाँ नहिं होवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै॥२१॥

ॐ ह्रीं मारण-कामवाण-वर्जनोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

दशविधि कामबाण नशि जाई, शील बाड़ि पाले नवधाई।
जो जिय शिवसुन्दरि को जोवै, ब्रह्मचर्य जजि सब अघ खोवै॥२२॥

ॐ ह्रीं शुद्धब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व० स्वाहा।

जयमाला

शील शिरोमणि जगत में, सकल धरम शिरमौर।
शिवकर अघहर पुण्यभर, जजौं शील गुण ठौर॥१॥

बेसरी छन्द

शील सिद्ध थल का मग जानो, शील सुरग सरिता मन आनो।
शील भावतैं अघ नशि जाई, साँचा धरम शील है भाई ॥२॥
शील मनुज भव में ही गाया, नहिं निज जन्म सफल करि पाया।
शील समुद्र संसार तराई, साँचा धरम शील है भाई ॥३॥
शील सहाय करे जग जाकी, सुरनर सेव करत हैं ताकी।
ताको नाम लेत दुख जाई, साँचा धरम शील है भाई ॥४॥
शील सती सीता ने धारो, अग्निकुण्ड शीतल करि डारो।
शील प्रभाव जगत पुजवाई, साँचा धरम शील है भाई ॥५॥
शील सती द्रोपदि ने धारौ, ताफल कीचक भीम विदारौ।
भूप हरी पीछे फिर आई, साँचा धरम शील है भाई ॥६॥
शील सती नीली मन आनौ, सुरनर पूज भई जग जानौ।
दोष सकल जातैं नशि जाई, साँचा धरम शील है भाई ॥७॥
शील गुणवती कन्या लीनों, ताको देव सहाय जु कीनों।
शील विरततैं सुरगति पाई, साँचा धरम शील है भाई ॥८॥
शील सती सोमा ने धारा, ताफल सर्प भयो मणिहारा।
जग जस ले सुरलोक सिधाई, साँचा धरम शील है भाई ॥९॥

सेठ सुदर्शन यह व्रत कीनो, पुण्य प्रताप सुयश जग लीनो।
शील सुरेन्द्र सिद्ध पददाई, साँचा धरम शील है भाई ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

सोरठा

धरम जगत में सार, उत्तम क्षमा जु आदि दे।
भवदधि तारनहार, नमों धरम दशलक्षणी ॥१॥

बेसरी छन्द

क्षमा धरम सब जग में आला, निज परिणति को है रखवाला।
क्षमा रतन गुण रतन भंडारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥२॥
मार्दव धरम सकल गुण वृन्दा, मान विहंडन शिवसुख कंदा।
मार्दव गुणतैं विनय प्रसारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥३॥
आर्जव रीति सकल सुखदानी, सरम स्वभाव कुटिलता हानी।
आर्जव शिवपुर पन्थ सहारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥४॥
शौच धरम निर्मलता होई, शौच धरम सब विधि मल खोई।
शौच धरम शिवमन्दिर द्वारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥५॥
सत्य धरम सम सार न कोई, सत्य धरम जिनभाषित होई।
सत्य सकल सन्तनिकूँ प्यारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥६॥
संयम मन इन्द्रियवश लावै, त्रस थावर के प्राण खावै।
संयम भाव सदा उर धारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥७॥
तप सब आशा-पाशी तोरै, कर्म अनादि बन्धकौ छोरै।
तप जलतैं ह्वै अघ मल न्यारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥८॥
त्याग पाप-मल धोवनहारा, त्याग धरम उर करै उजारा।
त्याग भावतैं कर्म निवारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥९॥
नगन मोक्ष का बड़ा निशाना, नगन बिना नाहीं शिवथाना।
आकिंचन वृष नगन विचारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥१०॥

ब्रह्मचर्य शिवनारि मिलावै, ता बिन जीव जगत भरमावै।
ब्रह्मचर्य ह्वै थिर मन धारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥११॥
ऐसे दश विधि धरम पियारा, जन्म-रोग-हर औषधिसारा।
'टेक' धरम निजपर निरवारो, मोकूँ भवसागरतैं तारो ॥१२॥

दोहा

आतम अवलोकन धरम, दशविध धरि मन लाय।
जल फलादि वसु द्रव्यतैं, धरम जजौं हरषाय॥१४॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शौच-संयम-तप-त्यागाकिंचन-ब्रह्मचर्य-दशलक्षणधर्मेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व॰ स्वाहा।

दशविधि धरम उपायकै, भवसागर तिरि जाय।
मनवांछा मेरी यही, भव भव होय सहाय॥१५॥

इत्याशीर्वादः

(108 जाप्य देकर आरती करके शान्ति विसर्जन करें।)

दशलक्षण के भिन्न-भिन्न जाप्य

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तममार्दव धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमार्जव धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमशौच धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमसत्य धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमसंयम धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमतपो धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमत्याग धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्य धर्मांगाय नमः
ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः

समुच्चय जाप्य

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-त्यागाकिंचन्य-ब्रह्मचर्य-धर्मांगाय नमः

तत्त्वार्थसूत्र

आचार्य गृद्धपिच्छ

मोक्ष-मार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्म-भूभृताम्।
ज्ञातारं विश्व-तत्त्वानां वन्दे तद्गुण-लब्धये।।

स्रग्धरा

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नवपदसहितं जीव-षट्काय-लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगति-ज्ञानचारित्र भेदाः।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्-भिरीशैः,
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः।। १।।
सिद्धे जयप्प-सिद्धे चउव्विहाराहणाफलं पत्ते।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ।। २।।
उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाण-माराहणा भणिया ।। ३।।

प्रथमोऽध्यायः

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।। १।। तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।। २।। तन्निसर्गादधिगमाद् वा।। ३।। जीवाजीवास्रवबन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम्।। ४।। नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः।। ५।। प्रमाण-नयैरधिगमः ।। ६।। निर्देशस्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानतः।।७।। सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-क्रालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च।। ८।। मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय केवलानि ज्ञानम्।। ९।। तत्प्रमाणे।। १०।। आद्ये परोक्षम्।। ११।। प्रत्यक्षमन्यत्।। १२।। मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्।। १३।। तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम्।। १४।। अवग्रहेहावायधारणाः।। १५।। बहु-बहुविध-क्षिप्रानि: सृनानुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम्।। १६।। अर्थस्य।। १७।। व्यञ्जनस्यावग्रहः।। १८।। न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम्।। १९।। श्रुतं मतिपूर्वं द्वयनेकद्वादशभेदम्।। २०।। भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम्।। २१।। क्षयोपशमनिमित्तः षड् विकल्पः शेषाणाम्।।

२२।। ऋजुविपुलमती मनः पर्ययः।। २३।। विशुद्धयप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः।। २४।। विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधिमनः पर्याययोः।। २५।। मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु।। २६।। रूपिष्ववधेः।। २७।। तदनन्तभागे मनः पर्ययस्य।। २८।। सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य।। २९।। एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः।। ३०।। मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च।। ३१।। सदसतोरविशेषाद् - यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्।। ३२।। नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जुसूत्र-शब्द-समभिरूढैवंभूता नयाः।। ३३।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे प्रथमोऽध्यायः।। १।।

द्वितीयोऽध्यायः

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-मौदयिक- पारिणामिकौ च।। १।। द्वि-नवाष्टादशैकविंशति-त्रिभेदा यथाक्रमम्।। २।। सम्यक्त्व-चारित्रे।। ३।। ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च।। ४।। ज्ञानाज्ञानदर्शन-लब्धयश्चतुस्त्रि-त्रि-पंचभेदाः सम्यक्त्व-चारित्र- संयमासंयमाश्च।। ५।। गति-कषाय-लिङ्ग-मिथ्यादर्शनाज्ञाना-संयतासिद्ध- लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः।। ६।। जीवभव्याभव्यत्वानि च।। ७।। उपयोगो लक्षणम्।। ८।। स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः।। ९।। संसारिणो मुक्ताश्च।। १०।। समनस्कामनस्काः।। ११।। संसारिणस्त्रस-स्थावराः।। १२।। पृथिव्यप्तेजोवायु- वनस्पतयः स्थावराः।। १३।। द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः।। १४।। पञ्चेन्द्रियाणि।। १५।। द्विविधानि।। १६।। निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम्।। १७।। लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम्।। १८।। स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः - श्रोत्राणि।। १९।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः।। २०।। श्रुत-मनिन्द्रियस्य।। २१।। वनस्पत्यन्तानामेकम्।। २२।। कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि।। २३।। संज्ञिनः समनस्काः।। २४।। विग्रहगतौ कर्मयोगः।। २५।। अनुश्रेणि गतिः।। २६।। अविग्रहा जीवस्य।। २७।। विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः।। २८।। एकसमयाविग्रहा।। २९।। एकं द्वौ त्रीन् वानाहारकः।। ३०।। सम्मूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म।। ३१।। सचित्त-शीत-संवृत्ताः सेतरा मिश्राश्चैकश-स्तद्योनयः।। ३२।। जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः।। ३३।।

देवनारकाणामुपपादः।। ३४।। शेषाणां सम्मूर्च्छनम्।। ३५।। औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि।। ३६।। परं परं सूक्ष्मम्।। ३७।। प्रदेशतोऽसंख्येय-गुणं प्राक् तैजसात्।। ३८।। अनन्तगुणे परे।। ३९।। अप्रतीघाते।। ४०।। अनादिसम्बन्धे च।। ४१।। सर्वस्य।। ४२।। तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः।। ४३।। तिरुपभोगमन्त्यम्।। ४४।। गर्भ-सम्मूर्च्छनजमाद्यम्।। ४५।। औपपादिकं वैक्रियिकम्।। ४६।। लब्धिप्रत्ययं च।। ४७।। तैजसमपि।। ४८।। शुभं विशुद्ध-मव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव।। ४९।। नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि।। ५०।। न देवाः।। ५१।। शेषास्त्रिवेदाः।। ५२।। औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः।। ५३।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे द्वितीयोऽध्यायः।। २।।

तृतीयोऽध्यायः

रत्न-शर्करा-बालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमः प्रभा भूमयो घनाम्बुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः।। १।। तासु त्रिंशत्पंचविंशति-पंचदश-दश-त्रि-पंचोनैक-नरक-शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम्।। २।। नारका नित्याशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः।। ३।। परस्परोदीरितदुः खाः।। ४।। संक्लिष्टासुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः।। ५।। तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः।। ६।। जम्बूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः।।७।। द्वि-र्द्वि-र्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व परिक्षेपिणो वलयाकृतयः।। ८।। तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः।। ९।। भरत- हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि।। १०।। तद्-विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्-महाहिमवन्-निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वताः।। ११।। हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः।। १२।। मणि-विचित्र-पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः।। १३।। पद्म-महापद्म-तिगिंछ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि।। १४।। प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदर्द्ध-विष्कम्भो ह्रदः।। १५।। दशयोजनावगाहः।। १६।। तन्मध्ये योजनं पुष्करम्।। १७।। तद्-द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च।। १८।। तन्निवासिन्यो

देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः।। १९।। गङ्गासिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता- सीतासीतोदा-नारीनरकान्ता-सुवर्णरूप्यकूला-रक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः।। २०।। द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः।। २१।। शेषास्त्वपरगाः।। २२।। चतुर्दशनदी-सहस्र-परिवृता गङ्गा-सिन्ध्वादयो नद्यः।। २३।। भरतः षड्विंशति-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः षट्- चैकोनविंशतिभागा योजनस्य।। २४।। तद्द्विगुण-द्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः।। २५।। उत्तरा दक्षिण-तुल्याः।। २६।। भरतैरावतयोर्वृद्धि-ह्रासौ षट्-समयाभ्या-मुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम्।। २७।। ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः।। २८।। एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारिवर्षकदैवकुरवकाः।। २९।। तथोत्तराः।। ३०।। विदेहेषु संख्येयकालाः।। ३१।। भरतस्य विष्कम्भो जम्बू द्वीपस्य नवति शतभागः।। ३२।। द्विर्धातकी खण्डे।। ३३।। पुष्करार्द्धे च।। ३४।। प्राङ् मानुषोत्तरान्मनुष्याः।। ३५।। आर्या म्लेच्छाश्च।। ३६।। भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः।। ३७।। नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते।। ३८।। तिर्यग्योनिजानां च।। ३९।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे तृतीयोऽध्यायः।। ३।।

चतुर्थोऽध्यायः

देवाश्चतुर्णिकायाः।। १।। आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः।। २।। दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः।। ३।। इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्ष-लोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य- किल्विषिकाश्चैकशः।। ४।। त्रायस्त्रिंश-लोकपालवर्ज्या-व्यन्तर-ज्योतिष्काः।। ५।। पूर्वयोर्द्वीन्द्राः।। ६।। कायप्रवीचारा आ ऐशानात्।। ७।। शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः।। ८।। परेऽप्रवीचाराः।। ९।। भवनवासिनोऽसुरनाग- विद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः।। १०।। व्यन्तराः किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः।। ११।। ज्योतिष्काः सूर्या-चन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च।। १२।। मेरु- प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके।। १३।। तत्कृतः कालविभागः।। १४।। बहिरवस्थिताः।। १५।। वैमानिकाः।। १६।। कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च।। १७।।

उपर्युपरि।। १८।। सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ट-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-पराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च।। १९।। स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धी-न्द्रियावधि-विषयतोऽधिका:।। २०।। गति-शरीर-परिग्रहाऽभिमानतो हीना:।। २१।। पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु।। २२।। प्राग्ग्रैवेयकेभ्य: कल्पा:।। २३।। ब्रह्मलोकालया लौकान्तिका:।। २४।। सारस्वतादित्यवह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च।। २५।। विजयादिषु द्विचरमा:।। २६।। औपपादिक-मनुष्येभ्य: शेषास्तिर्यग्योनय:।। २७।। स्थितिरसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीन-मिता:।। २८।। सौधर्मैशानयो: सागरोपमेऽधिके।। २९।। सानत्कुमार-माहेन्द्रयो: सप्त।। ३०।। त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभि-रधिकानि तु।। ३१।। आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ।। ३२।। अपरा पल्योपममधिकम्।। ३३।। परत: परत: पूर्वा पूर्वानन्तरा।। ३४।। नारकाणां च द्वितीयादिषु।। ३५।। दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम्।। ३६।। भवनेषु च।। ३७।। व्यन्तराणां च।।। ३८।। परा पल्योपममधिकम्।। ३९।। ज्योतिष्काणां च।। ४०।। तदष्टभागोऽपरा।। ४१।। लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम्।। ४२।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे चतुर्थोऽध्याय:।। ४।।

पंचमोऽध्याय:

अजीवकाया धर्माधर्माकाश-पुद्गला:।। १।। द्रव्याणि।। २।। जीवाश्च।। ३।। नित्याऽवस्थितान्यरूपाणि।। ४।। रूपिण: पुद्गला:।। ५।। आ आकाशादेकद्रव्याणि।। ६।। निष्क्रियाणि च।। ७।। असंख्येया: प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम्।। ८।। आकाशस्यानन्ता:।। ९।। संख्येया-संख्येयाश्च पुद्गलानाम्।। १०।। नाणो:।। ११।। लोकाकाशेऽवगाह:।। १२।। धर्माऽधर्मयो: कृत्स्ने।। १३।। एकप्रदेशादिषु भाज्य: पुद्गलानाम्।। १४।। असंख्येयभागादिषु जीवानाम्।। १५।। प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत्।। १६।। गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकार:।। १७।। आकाशस्यावगाह:।। १८।। शरीर-वाङ्-मन:

प्राणापानाः पुद्गलानाम्।। १९।। सुख-दुःख जीवित-मरणोपग्रहाश्च।। २०।। परस्परोपग्रहो जीवानाम्।। २१।। वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वाऽपरत्वे च कालस्य।। २२।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः।। २३।। शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोद्योत-वन्तश्च।। २४।। अणवः स्कन्धाश्च।। २५।। भेद-संघातेभ्य उत्पद्यन्ते।। २६।। भेदादणुः।। २७।। भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः।। २८।। सद् द्रव्यलक्षणम्।। २९।। उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्।। ३०।। तद्भावाऽव्ययं नित्यम्।। ३१।। अर्पिताऽनर्पितसिद्धेः।। ३२।। स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बन्धः।। ३३।। न जघन्यगुणानाम्।। ३४।। गुण-साम्ये सदृशानाम्।। ३५।। द्वयधिकादि-गुणानां तु।। ३६।। बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च।। ३७।। गुण-पर्ययवद् द्रव्यम्।। ३८।। कालश्च।। ३९।। सोऽनन्तसमयः।। ४०।। द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः।। ४१।। तद्भावः परिणामः।। ४२।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे पञ्चमोऽध्यायः।।

षष्ठोऽध्यायः

कायवाङ्मनः कर्म योगः।। १।। स आस्रवः।। २।। शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य।। ३।। सकषायाऽकषाययोः साम्परायिकेर्या-पथयोः।। ४।। इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः पञ्च-पञ्चविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः।। ५।। तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात-भावाऽधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्-विशेषः।। ६।। अधिकरणं जीवाजीवाः।। ७।। आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत-कषायविशेषैस्त्रिश्चतुश्चैकशः।। ८।। निर्वर्तना-निक्षेप- संयोग-निसर्गा द्विचतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम्।। ९।। तत्प्रदोष-निन्हव - मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः।। १०।। दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभय स्थान्यसद्वेद्यस्य।। ११।। भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षन्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य।। १२।। केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य।। १३।। कषायोदयात्तीव्र-परिणामश्चारित्रमोहस्य।। १४।। बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्याऽयुषः।। १५।। माया तैर्यग्योनस्य।। १६।। अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य।। १७।। स्वभाव-मार्दवं च।। १८।। निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम्।। १९।। सरागसंयम-

संयमासंयमाकामनिर्जरा-बालतपांसि दैवस्य।। २०।। सम्यक्त्वं च।। २१।। योगवक्रता विसंवादनं चाऽशुभस्य नाम्नः।। २२।। तद्विपरीतं शुभस्य।। २३।। दर्शन-विशुद्धिर्विनयसंपन्नता शील- व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधि- र्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्ति-रावश्यका- परिहाणिर्मार्गप्रभावना-प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य।। २४।। परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्- भावने च नीचैर्गोत्रस्य।। २५।। तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य।। २६।। विघ्नकरणमन्तरायस्य।। २७।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे षष्ठोऽध्यायः।। ६।।

सप्तमोऽध्यायः

हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्।। १।। देश-सर्वतोऽणु-महती।। २।। तत्स्थैर्यार्थं भावना: पञ्च पञ्च।। ३।। वाङ्मनो- गुप्तीर्यादान-निक्षेपण-समित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च।। ४।। क्रोध-लोभ- भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च।। ५।। शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्माविसंवादा: पञ्च।। ६।। स्त्रीरागकथाश्रवण-तन्मनोहरांग-निरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्ट-रस-स्वशरीरसंस्कार-त्यागा: पञ्च।।७।। मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय- विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च।।८।। हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम्।। ९।। दुःखमेव वा।। १०।। मैत्री- प्रमोद- कारुण्य- माध्यस्थानि च सत्त्व- गुणाधिक-क्लिश्य- मानाविनयेषु।। ११।। जगत्काय- स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम्।। १२।। प्रमत्तयोगात्प्राण- व्यपरोपणं हिंसा।। १३।। असदभिधानमनृतम।। १४।। अदत्तादानं स्तेयम्।। १५।। मैथुनमब्रह्म।। १६।। मूर्छा परिग्रहः।। १७।। निःशल्यो व्रती।। १८।। अगार्यनगारश्च।। १९।। अणुव्रतोऽगारी।। २०।। दिग्देशानर्थदण्ड- विरति-सामायिक- प्रोषधोपवासोपभोग- परिभोग- परिमाणाऽतिथि- संविभागव्रत-सम्पन्नश्च।। २१।। मारणान्तिकीं सल्लेखां जोषिता।। २२।। शंका-कांक्षा-विचिकित्सान्यदृष्टि- प्रशंसासंस्तवा: सम्यग्दृष्टेतीचारा:।। २३।। व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम्।। २४।। बन्ध-वध- च्छेदातिभारारोपणान्नपानानिरोधाः।। २५।। मिथ्योपदेश- रहोभ्याख्यान- कूटलेखक्रियान्यासापहार- साकारमन्त्र- भेदाः।। २६।।

स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-हीनाधिक-मानोन्मान-प्रतिरूपकव्यवहाराः।। २७।। परविवाह-करणेत्वरिका-परिगृहीताऽपरिगृहीता-गमनाऽनंगक्रीडा-काम-तीव्राभिनिवेशाः।। २८।। क्षेत्रवास्तु-हिरण्य सुवर्ण-धनधान्य-दासीदास कुप्य प्रमाणातिक्रमाः।। २९।। ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि।। ३०।। आनयन- प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः।। ३१।। कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्या-समीक्ष्याधिकरणोपभोग-परिभोगाऽनर्थक्यानि।। ३२।। योग-दुःप्रणिधानाऽनादर-स्मृत्यनु-पस्थानानि।। ३३।। अप्रत्यवेक्षिता-प्रमार्जितोत्सर्गादान- संस्तरोपक्रमणा-नादर-स्मृत्यनुपस्थानानि।। ३४।। सचित्तसम्बन्ध-सम्मिश्राभिषव-दुःष्पक्वाहाराः।। ३५।। सचित्त-निक्षेपापिधान-परव्यपदेश-मात्सर्य-कालातिक्रमाः ।। ३६।। जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि।। ३७।। अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम्।। ३८।। विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः।। ३९।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे सप्तमोऽध्यायः।। ७।।

अष्टमोऽध्यायः

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः।। १।। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः।। २।। प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः।। ३।। आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः।। ४।। पञ्च-नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम् ।। ५।। मति-श्रुतावधि-मनः पर्यय-केवलानाम्।। ६।। चक्षुरचक्षु-रवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यान-गृद्धयश्च।।७।। सदसद्वेद्ये।। ८।। दर्शन-चारित्र-मोहनीयाकषाय-कषाय-वेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषाय-कषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय- जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः।। ९।। नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि।।१०।। गति-जाति-शरीरांगोपांग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघात-परघाता तपो द्योतोच्छ्वास-

विहायोगतयः प्रत्येक-शरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशः कीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च।। ११।। उच्चैर्नीचैश्च।। १२।। दान-लाभ भोगोपभोग-वीर्याणाम्।। १३।। आदित-स्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-कोटी-कोट्यः परा स्थितिः।। १४।। सप्ततिर्मोहनीयस्य।। १५।। विंशतिर्नाम-गोत्रयोः।। १६।। त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः।। १७।। अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य।। १८।। नामगोत्रयोरष्टौ।। १९।। शेषाणामन्तर्मुहूर्ता।। २०।। विपाकोऽनुभवः।। २१।। स यथानाम।। २२।। ततश्च निर्जरा।। २३।। नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाह- स्थिताः सर्वात्म-प्रदेशेष्वनन्तानन्त- प्रदेशाः।। २४।। सद्वेद्य - शुभायुर्नाम-गोत्राणि पुण्यम्।। २५।। अतोऽन्यत्पापम्।। २६।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे अष्टमोऽध्यायः।। ८।।

नवमोऽध्यायः

आस्रवनिरोधः संवरः।। १।। स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-परीषह जय-चारित्रैः।। २।। तपसा निर्जरा च।। ३।। सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः।। ४।। ईर्या-भाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः।। ५।। उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः।। ६।। अनित्याशरण-संसारैकत्वा-न्यत्वाशुच्या स्रव-संवर-निर्जरा-लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तन-मनुप्रेक्षाः।। ७।। मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः।। ८।। क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण- दंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध-याचनालाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्शनानि।। ९।। सूक्ष्म-साम्पराय-छद्मस्थ-वीतरागयोश्चतुर्दश।। १०।। एकादश जिने।। ११।। बादर-साम्पराये सर्वे।। १२।। ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने।। १३।। दर्शन- मोहान्तराययोरदर्शनालाभौ।। १४।। चारित्र-मोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्या-क्रोश-याचना-सत्कार-पुरस्काराः।। १५।। वेदनीये शेषाः।। १६।। एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः।। १७।। सामायिकच्छेदोपस्थापना- परिहारविशुद्धि- सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम्।। १८।। अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रसपरित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः।। १९।। प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग- ध्यानान्युत्तरम्।।

२०।। नव चतुर्दश पञ्चद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ।। २१।। आलोचन-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग-तपश्छेद-परिहारोपस्थापना:।। २२।। ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचारा:।। २३।। आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष्य-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम्।। २४।। वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशा:। २५।। बाह्याभ्यन्तरोपध्य:।। २६।। उत्तम-संहननस्यैकाग्र-चिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात्।। २७।। आर्तरौद्रधर्म्य-शुक्लानि।। २८।। परे मोक्षहेतू।। २९।। आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहार:।। ३०।। विपरीतं मनोज्ञस्य।। ३१।। वेदनायाश्च।। ३२।। निदानं च।। ३३।। तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम्।। ३४।। हिंसानृत-स्तेय-विषय-संरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देशविरतयो:।। ३५।। आज्ञापाय-विपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम्।। ३६।। शुक्ले चाद्ये पूर्वविद:।। ३७।। परे केवलिन:।। ३८।। पृथक्त्वैकत्व-वितर्क-सूक्ष्मक्रिया-प्रतिपाति- व्युपरत-क्रिया-निवर्तीनि।। ३९।। त्र्येकयोग-काययोगायोगानाम्।। ४०।। एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे।। ४१।। अवीचारं द्वितीयम्।। ४२।। वितर्क: श्रुतम्।। ४३।। वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन-योगसंक्रान्ति:।। ४४।। सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्त-वियोजक-दर्शनमोह-क्षपकोप-शमकोपशान्त-मोहक्षपक-क्षीणमोह-जिना: क्रमशोऽसंख्येय-गुणनिर्जरा:।। ४५।। पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका: निर्ग्रन्था:।। ४३।। संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिंग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पत: साध्या:।। ४७।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे नवमोऽध्याय:।।

दशमोऽध्याय:

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम्।। १।। बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म-विप्रमोक्षो मोक्ष:।। २।। औपशमिकादि- भव्यत्वानां च।। ३।। अन्यत्र केवल-सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्य:।। ४।। तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्या लोकान्तात्।। ५।। पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्-बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च।। ६।। आविद्धकुलालचक्रवदव्यपगतलेपाऽलांबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च।। ७।। धर्मास्तिकायाभावात्।। ८।। क्षेत्र-काल-गति-लिंग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येक-बुद्ध-बोधित- ज्ञानावगाहनान्तर-संख्याल्प-बहुत्वत: साध्या:।। ९।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे दशमोऽध्याय:।। १०।।

अक्षर-मात्र-पद-स्वरहीनं, व्यञ्जन-संधि-विवर्जित-रेफम्।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे।।१।।
दशाध्याये परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति।
फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुंगवैः।।२।।
तत्त्वार्थ - सूत्रकर्तारं, गृद्ध - पिच्छोप - लक्षितम्।
वन्दे गणीन्द्रसंजात, मुमास्वामीमुनीश्वरम्।।३।।
पढम चउक्के पढमं, पंचमे जाणि पुग्गलं तच्च।
छहसत्तमे हि आसव, अट्ठमे बंध णायव्वो।।४।।
णवमे संवर णिज्जर, दहमे मोक्खं वियाणे हि।
इह सत्त तच्च भणियं, दह सुत्ते मुणिवरिं देहिं।।५।।
जं सक्कइ तं कीरइ, जं च ण सक्कइ तहेव सद्दहणं।
सद्दहमाणो जीवो, पावई अजरामरं ठाणं।।६।।
तववरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणं।
अन्ते समाहिमरणं, चउगइ दुक्खं णिवारेई।।७।।
कोटिशतं द्वादशचैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस् त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्य,- मेतच्छुतं पंचपदं नमामि।।८।।
अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा।।९।।
गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञानदर्शननायकाः।
चारित्रार्णवगम्भीरा, मोक्षमार्गोपदेशकाः।।१०।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रम्।।

आरती विद्यासागर जी

विद्यासागर की, गुण आगर की, शुभ मंगलदीप सजायके।
मैं आज उतारूँ आरतिया...। टेक।।
मल्लप्पा श्री, श्रीमती के गर्भ विषैं गुरु आये।
ग्राम सदलगा जन्म लिया है, सब जन मंगल गाये।
गुरुजी सब जन मंगल गाये।.....
न रागी की, न द्वेषी की, शुभ मंगल दीप सजायके।
मैं आज उतारूँ आरतिया....।। १।।
गुरुवर पाँच महाव्रत धारी, आतम ब्रह्म बिहारी।
खड्गधार शिव पथ पर चलकर, शिथिलाचार निवारी।।
गुरुजी शिथिलाचार निवारी।....
गृह त्यागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे
मैं आज उतारूँ आरतिया.....।। २।।
गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया।
भक्ति भाव से आरति करके, फूला नहीं समाया।।
गुरुजी फूला नहीं समाया।.....
ऐसे मुनिवर को, ऐसे ऋषिवर को, हो वन्दन बारम्बार।
मैं आज उतारूँ आरतिया....।। ३।।

आरती प्रमाणसागर जी

ओम जय प्रमाण सागर, मुनि जय प्रमाण सागर
चलते-फिरते तीरथ-२, आगम के आगर,
ओम जय प्रमाण.....
हजारीबाग में जन्में, सोहनी के तारे,
माता सोहनी के तारे
पिता सुरेन्द्र जी सेठी-२ के घर में आये,
ओम जय प्रमाण.....
सोनागिर में देखो, मंगल घड़ी आई,
मंगल घड़ी आई
गुरु विद्यासागर से मुनि दीक्षा पाई,
ओम जय प्रमाण सागर, मुनि जय प्रमाण सागर
जीव दया करुणा का, करते आवाहन,
मुनिवर करते आवाहन
मूक पशु, प्राणी रक्षा में जीवन है अर्पण,
ओम जय प्रमाण.....
सबको सब कुछ देता, ये संत है अलबेला
संत है अलबेला
श्री सम्मेदशिखर में, भक्तों का मेला,
ओम जय प्रमाण.....
गुरु विद्यासागर की, महिमा बिखराते,
महिमा बिखराते
मंगल प्रवचन करते, जिनवाणी गाते,
ओम जय प्रमाण सागर।

श्रावकप्रतिक्रमण

समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभभावना।
आर्त्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि प्रतिक्रमणं मतम्।

सब जीवों पर साम्यभाव धारण करके शुभ भावनापूर्वक संयम पालते हुये, आर्त-रौद्र का त्याग प्रतिक्रमण कहलाता है।

हे जिनेन्द्र ! हे देवाधिदेव ! हे वीतरागी सर्वज्ञ हितोपदेशी अरिहन्त प्रभु। मैं पापों के प्रक्षालन के लिए, पापों से मुक्त होने के लिए, आत्म उत्थान के लिए, आत्म जागरण के लिए प्रतिक्रमण करता हूँ। (इस प्रकार प्रतिज्ञा करके एक आसन से बैठकर प्रतिक्रमण प्रारंभ करें।)

पापी, दुरात्मा, जड़बुद्धि, मायावी, लोभी और राग-द्वेष से मलिन चित्तवाले मैंने जो दुष्कर्म किया है, उसे हे तीन लोक के अधिपति। हे जिनेन्द्र देव। निरन्तर समीचीन मार्ग पर चलने की इच्छा करने वाला मैं आज आपके पादमूल में निन्दापूर्वक उसका त्याग करता हूँ।

हाय मैंने शरीर से दुष्टकार्य किया हे, हाय मैंने मन से दुष्ट विचार किया है, हाय मैंने मुख से दुष्ट वचन बोला है। उसके लिए मैं पश्चाताप करता हुआ भीतर ही भीतर जल रहा हूँ।

निन्दा और गर्हा से युक्त होकर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावपूर्वक किये गये अपराधों की शुद्धि के लिए मैं मन, वचन और काय से प्रतिक्रमण करता हूँ।

समस्त संसारी जीवों की सर्व योनियाँ (जातियाँ) चौरासी लाख हैं एवं सर्व संसारी जीवों के सर्व कुल एक सौ साढ़े निन्यानवे (१९९-१/२) लाख करोड़ होते हैं, इनमें उपस्थित जीवों की विराधना की हो एवं इनके प्रति होने वाले राग द्वेष से जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा में दुक्कडं (तत्सम्बन्धी मेरा दृष्कृत मिथ्या हो)

जो एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय तथा पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीव हैं, इनका जो उत्तापन, परितापन, विराधन और उपघात किया हो, कराया हो और करने वाले की अनुमोदना की हो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

सूक्ष्म, बादर–पर्याप्तक, निर्वृत्त्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक जीवों में से किसी भी जीव की विराधना की हो – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

एकान्त, विपरीत, संशय, वैनयिक और अज्ञान – इन पांच प्रकार के मिथ्यामार्ग और उनके सेवकों की मन–वचन से प्रशंसा की हो–तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

जिनदर्शन, जलगालन, रात्रिभोजनत्याग, पाँच उदुम्बर त्याग, मद्य त्याग, मांस त्याग, मधुत्याग और जीवदया पालन – इन आठ श्रावक के मूलगुणों में अतिचार के द्वारा जो पाप लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन् ! मूलगुणों के अंतर्गत जिनदर्शन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अविनय से दर्शन किया हो तथा दर्शन या पूजन करते समय मन, वचन, काय की शुद्धि नहीं रखी हो, जिनदर्शन व्रत पालन करते हुये जिनमार्ग में शंका की हो, शुभाचरण पालन कर संसार–सुख की वांछा की हो, धर्मात्माओं के मलिन शरीर को देखकर ग्लानि की हो, मिथ्यामार्ग और उसके सेवन करने वालों की मन से प्रशंसा की हो तथा मिथ्यामार्ग की वचन से स्तुति की हो, इत्यादि अतिचार अनाचार दोष लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे नाथ ! मूलगुणों के अंतर्गत जलगालन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, जल छानने के ४८ मिनट बाद उसे फिर नहीं छानकर उसी का उपयोग किया हो, प्रमाण से छोटे, इकहरे, मलिन जीर्ण एवं सछिद्र वस्त्र से जल छाना हो, गर्म पानी की मर्यादा समाप्त हो जाने पर उसका उपयोग किया हो, छानने से शेष बचे जल को और जीवानी को यथास्थान (कड़े वाली बाल्टी से कुओं में) न पहुँचाया हो उसे नाली आदि में डाल दिया हो, तथा जीवानी की सुरक्षा में या पानी छानने की विधि में प्रमाद किया हो इत्यादि अनाचार मुझे लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे देवाधिदेव ! मूलगुणों के अंतर्गत रात्रि भोजन त्याग व्रत में रात्रि में बने भोजन का, सूर्योदय से ४८ मिनट के भीतर या सूर्यास्त के एक मुहूर्त्त पूर्व तथा औषधि के निमित्त रात्रि को रस, फल आदि का सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार–अनाचार दोष लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अंतर्गत पंच-उदम्बर फल त्याग व्रत में सूखे अथवा औषधि निमित्त उदम्बर फलों को, सर्व साधारण वनस्पति का, अदरक-मूली आदि अनन्तकायिक वनस्पति का, त्रस जीवों के आश्रयभूत वनस्पति का, बिना फाड़ किये सेमफली आदि एवं अनजान फलों का सेवन किया हो, कराया हो या करने वालों की अनुमोदना की हो, इत्यादि अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे दया के सागर ! मूलगुणों के अंतर्गत मद्यत्याग व्रत में मर्यादा के बाहर का अचार, मुरब्बा आदि सर्व प्रकारके सन्धानों का, दो दिन व दो रात्रि व्यतीत हुए दही, छाछ एवं काँजी आदि का, आसवों एवं अर्कों का तथा भांग, नागफेन, धतूरा, पोस्त का छिलका, चरस और गांजा आदि नशीले पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या सेवन करने वालों की अनुमोदना की हो तथा अन्य और भी जो अतिचार-अनाचार जन्य दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अंतर्गत मांस त्यागव्रत में चमड़े के बेल्ट, पर्स, जूता-चप्पल, घड़ी का पट्टा आदि का स्पर्श हो गया या चमड़े से आच्छादित अथवा स्पर्शित हींग, घी, तेल एवं जल आदि का, अशोधित भोजन का, जिसमें त्रस जीवों का संदेह हो ऐसे भोजन का, बिना छना हुआ अथवा विधिपूर्वक दुहरे छने (वस्त्र) से नहीं छाना गया घी, दूध, तेल एवं जल आदि का, सड़े घुने हुये अनाज आदि का, शोधनविधि से अनभिज्ञ साधर्मी या शोधन-विधि से अपरिचित विधर्मी के हाथ से तैयार हुए भोजन का, बासा भोजन का, रात्रि भोजन का, चलित रस पदार्थों का, बिना दो फाड़ किये काजू, पुरानी मूंगफली, सेमफली एवं भिंडी आदि का और अमर्यादित दूध, दही तथा छांछ आदि पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए ही अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य जो भी अतिचार अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे परमपिता परमात्मा ! मूलगुणों के अंतर्गत मधुत्याग व्रत में औषधि के निमित्त मधु का, फलों के रसों का एवं गुलकन्द आदि स्वयं सेवन किया हो, कराया हो, करते हुए ही अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा में दुक्कडं।

हे नित्य निरंजन देव ! मूलगुणों के अंतर्गत जीवदया व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अज्ञान रखा हो, उपेक्षा की हो, बिना प्रयोजन जीवों को सताया हो तथा अंगोपांग छेदन किये हों, कराये हों या अनुमोदना की हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

जुआ, मांस, मदिरा, शिकार, वेश्यागमन, चोरी और परस्त्रीरमण इन सप्तव्यसन सेवन में जो पाप लगा हो – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

देव-दर्शन, पूजन, साधु उपासन-वैयावृत्ति, स्वाध्याय, संयमपालन, इच्छायें सीमित करना और अर्जित संपत्ति का सदुपयोग (दान देना) इन षडावश्यक पालन में अतिचारपूर्वक जो दोष लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इष्टवियोग, अनिष्टसंयोग, पीड़ाचिन्तन और निदान – ये चार आर्तध्यान। हिंसानन्द, हिंसानन्द, मृषानन्द, चौर्यानन्द और परिग्रहानन्द – ये चार रौद्रध्यान द्वारा जो पाप लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

राजकथा, चोरकथा, स्त्रीकथा और भोजनकथा करने से जो पाप लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

जीवों को सताने वाला दुष्ट मन, दुष्ट वचन और दुष्ट काय – ये तीन दण्ड, माया, मिथ्या और निदान ये तीन शल्य और शब्द गारव, ऋद्धि गारव और सात गारव द्वारा जो पाप लगे हों – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

आहार, भय, मैथुन और परिग्रह – इन चार संज्ञाओं के द्वारा जो पाप बन्ध हुआ हो – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इहलोकभय, परलोकभय, मरणभय, वेदनाभय,अगुप्तिभय, अरक्षाभय (अत्राणभय) और अकस्मात् भय द्वारा जो पापबन्ध हुआ हो – तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

स्थूल हिंसाविरति व्रत का पालन करते हुए जीवों को मारा हो, बांधा हो,

अंगोपांग छेदे हों, अधिक बोझ लादा हो, एवं अन्न-पान का निरोध किया हो, इत्यादि अनेक दोष कृत-कारित अनुमोदना से किया हो -तस्स मिच्छा मे दुक्कड़।

स्थूल चौर्यविरति व्रत के पालन करने में चोर द्वारा चुराया हुआ द्रव्य ग्रहण किया हो, राज्य के विरुद्ध कार्य किया हो, धरोहर हरण करने के भाव किये हों, तौलने के बाँट कमती या बढ़ती रखे हों और अधिक कीमती वस्तु में अल्प कीमती वस्तु मिलाकर बेची हो एवं मन, वचन, काय एवं कृत-कारित अनुमोदना से, चोरी का प्रयोग बतलाने से जो दोष लगे हों -तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

स्थूल अब्रह्मविरति व्रत पालन करने में व्यभिचारिणी स्त्री के साथ आने-जाने का व्यवहार रखा हो, कुमारी, विधवा एवं सधवा आदि अपरिगृहीत स्त्रियों के साथ आने-जाने का लेन-देन का व्यवहार रखा हो, काम सेवन के अंगों को छोड़कर दूसरे अंगों से कुचेष्टाएं की हों, काम के तीव्र वेग से बीभत्स विचार बने हों और मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से अन्य के पुत्र-पुत्रियों का विवाह किया हो, इस प्रकार जो भी दोष लगे हों -तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

स्थूल परिग्रह-परिमाण व्रत में मन, वचन, काय एवं कृत, कारित अनुमोदना से जमीन और मकान आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, गाय, बैल आदि धन, अनाज आदि धान्य, दासी-दास, चांदी-सोना, वस्त्र एवं बर्तन आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

(नौ बार णमोकार का जाप करें)

दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डविरति व्रत - ये तीन गुणव्रत और भोग-परिमाणव्रत, परिभोगपरिमाणव्रत, अतिथिसंविभागव्रत, समाधिमरणव्रत, ये चार शिक्षाव्रत रूप बारह व्रतों में जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पाँच इन्द्रियों और मन को वश में न करने सो जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

मोह के वशीभूत होकर अनेक प्रकार के उत्तमोत्तम वस्त्र एवं स्त्रियों को आकर्षित करने वाला शरीर का श्रृंगार किया हो, राग के उद्रेक से युक्त हँसी में

अशिष्ट वचनों का प्रयोग किया हो और परस्पर प्रीति से रहने वालों के बीच में द्वेष किया हो, तज्जन्य जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तप और स्वाध्याय से हीन असम्बद्धप्रलाप करने में, अन्यथा पढ़ने-पढ़ाने से एवं अन्यथा ग्रहण (सुने) करने से जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका की किसी भी प्रकार से निन्दा की हो, कराई हो, सुनी हो, सुनाई हो इससे जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

साधुओं वा साधर्मियों से कटु वचन बोला हो एवं आहार दान देने में प्रमाद करने से जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

देव-शास्त्र-गुरु की अविनय एवं आसादना से जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पाश्चात्य वेशभूषा का उपयोग कर टी.वी. आदि देखकर एवं उपन्यास आदि पढ़कर शील में जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

उच्च कुलों को गर्हित कुल बनाने में कृत-कारित-अनुमोदना से सहयोग देने में जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चलने-फिरने, शरीर को हिलने-हिलाने, उठने-बैठने, छींकने-खांसने, सोने, जम्हाई लेने और मार्ग चलते-चलाने में, देखे-अनदेखे तथा जाने-अनजाने में जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

किसी भी जीव को मैंने दबा दिया हो, कुचल दिया हो, घुमा दिया हो, भयभीत कर दिया हो, त्रास दिया हो, वेदना पहुँचाई हो, छेदन-भेदन कर दिया हो, अथवा किसी प्रकार से भी कष्ट पहुँचाया हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

जाने-अनजाने में और भी जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हा दुट्ठकयं हा दुट्ठचिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो।।

हाय-हाय। मैंने दृष्ट कर्म किये, मैंने दुष्ट कर्मों का बार-बार चिन्तवन किया,

मैंने दुष्ट मर्म-भेदक वचन कहे - इस प्रकार मन, वचन और काय की दुष्टता से मैंने अत्यन्त कुत्सित कर्म किये। उन कर्मों का अब मुझे अत्यन्त पश्चाताप है।

हे प्रभु ! मेरा किसी के भी साथ राग नहीं है, द्वेष नहीं है, बैर नहीं है तथा क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं है, अपितु सर्व जीवों के प्रति उत्तम क्षमा है।

जब तक मोक्षपद की प्राप्ति न हो तब तक भव-भव में मुझे शास्त्रों के पठन-पाठन का अभ्यास, जिनेन्द्र पूजा, निरन्तर श्रेष्ठ पुरुषों की संगति, सच्चरित्र, सम्पन्न पुरुषों के गुणों की चर्चा, दूसरों के दोष कहने में मौन, सभी प्राणियों के प्रति प्रिय और हितकारी वचन एवं आत्मकल्याण की भावना (प्रतीत) ये सब वस्तुएँ प्राप्त होती रहें।

हे जिनेन्द्र ! मुझे जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो, तब तक आपके चरण मेरे हृदय में और मेरा हृदय आपके चरणों में लीन रहे।

हे भगवन् ! मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, शुभगति हो, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनेन्द्र के गुणों की प्राप्ति हो- ऐसी मेरी भावना है, ऐसी मेरी भावना है, ऐसी मेरी भावना है।